इकाई–1: शैक्षिक परीक्षण तथा मूल्यांकन (Educational Testing and Assessment: Concept, Context, Issues and Current Trends)

प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा के क्षेत्र में परीक्षण तथा मूल्यांकन दोनों ही स्तम्भ का कार्य करते हैं। परीक्षण द्वारा छात्र की पाठ्यवस्तु संबंधी उपलब्धियों की सूचनाएँ एकत्रित की जाती हैं, तथा मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षण तथा मूल्यांकन एक दूसरे के पूरक हैं।

परंपरागत ढंग से जो प्रामाणिक निष्पत्ति परीक्षा तथा शिक्षक द्वारा निर्मित परीक्षण बनाये जाते हैं, उनका लक्ष्य

उस परीक्षण विशेष की मानकीकरण प्रक्रिया (Process of Standardization) सम्पन्न की गई है। परीक्षण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं–अध्यापक निर्मित परीक्षण तथा मानकीकृत परीक्षण। अध्यापक निर्मित परीक्षणों की यही एक मुख्य सीमा होती है कि उनका प्रयोग क्षेत्र अत्यन्त सीमित होता है तथा इनका सफल प्रशासन कक्षा परिस्थितियों पर अत्यन्त निर्भर करता है।

5. प्रतिनिधित्वा (Representativeness)–सृष्टि की कोई सीमा नहीं। कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि जितना ज्ञान वह रखता है उसके आगे कुछ है ही नहीं। लेकिन फिर भी हम इस प्रकार के दावे आत्म विश्वास के साथ करते हैं, जैसे-विश्व में सारे कौवे काले होते हैं। अब यह तो है नहीं कि इस प्रकार की घोषणा करने वाले व्यक्ति ने पूरे विश्व का भ्रमण करके ऐसी बात कही हो, क्योंकि ऐसा करना सम्भव ही नहीं है। वस्तुत: हम पूरी जनसंख्या को लेकर कोई अनुसन्धान कार्य अवश्य करते हैं लेकिन पूरी जनसंख्या के आँकड़े नहीं ले पाते। अत: उसमें से एक विस्तृत न्यादर्श (Representative Sample) ले लेते हैं जिस पर हमारा सम्पूर्ण अनुसंधान कार्य आधारित होता है। एक उत्तम परीक्षण की दृष्टि से उसमें यह विशेषता होनी चाहिये कि वह प्रतिनिधि कहा जा सके। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति के व्यवहार के जिस न्यादर्श का मापन करने के लिये परीक्षण की रचना की गई है उसका मापन परीक्षण प्रतिनिधित्व से कर सके।

(1) **मानकीकृत (Standardized)**–एक उत्तम परीक्षण मानकीकृत होता है। इसका अर्थ यह है कि परीक्षण में दिये जाने वाले प्रश्नों, निर्देशों, परीक्षा लेने की विधियों तथा प्रशासन एवं फलांकन प्रक्रिया को पहले से ही निश्चित कर लिया गया हो ताकि मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ तरीके से किया जा सके। **सी. वी. गुड (C.V.Good)** के अनुसार–एक मानकीकृत परीक्षण वह है जिसमें विषयवस्तु का चयन अनुभव के आधार पर किया गया हो, जिसके प्रशासन एवं फलांकन की समरूप विधियों को विकसित किया गया हो तथा फलांकन को वस्तुनिष्ठ विधि से किया गया हो।

(2) **वस्तुनिष्ठता (Objectivity)**–किसी भी परीक्षण का वस्तुनिष्ठा होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इसका प्रभाव विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों पर ही पड़ता है। वास्तव में जो परीक्षा वस्तुनिष्ठा नहीं होती वह वैध तथा विश्वसनीय भी नहीं हो सकती। कोई परीक्षा वस्तुनिष्ठ तब होती है जब उसके प्रश्नों के उत्तरों पर अंक देते समय विभिन्न व्यक्तियों का मतभेद न हो, जिसके प्रश्नों की व्याख्या या जिनके अर्थ भिन्न-भिन्न प्रकार से न किये जा सकते हों, जिनके उत्तर बिल्कुल ठीक या बिल्कुल अशुद्ध हों और उन पर अंक देते समय विभिन्न व्यक्तियों में मतभेद न होता हो। संक्षेप में, वह परीक्षा वस्तुनिष्ठ कहलाती है जिस पर परीक्षक का व्यक्तिगत प्रभाव नहीं पड़ता है।

(3) **विभेदकारिता (Discriminative)**–एक उत्तम परीक्षण में विभेदकारिता का गुण अनिवार्य रूप से विद्यमान रहता है। वस्तुत: विभेदकारी परीक्षा उस परीक्षा को कहते हैं जो उच्च योग्यता एवं निम्न योग्यता वाले विद्यार्थियों में भेद बता सकें अर्थात्, यह परीक्षण प्रतिभाशाली एवं मन्दबुद्धि बालकों में अन्तर स्पष्ट कर सके। इस उद्देश्य से परीक्षा के प्रश्न कुछ जटिल बनाये जाते हैं और कुछ सरल जिससे कि उन्हें दोनों प्रकार के विद्यार्थी हल कर सकें। परीक्षण की यह विशेषता होनी चाहिये कि कुछ अच्छे विद्यार्थियों को अधिक अंक मिलें तथा कमजोर विद्यार्थियों को कम अंक मिलें।

(4) **विश्वसनीयता (Reliability)**–एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसकी विश्वसनीयता है अर्थात्, जिस पर विश्वास किया जा सके। विश्वसनीयता से हमारा तात्पर्य ऐसी परीक्षा से है जिसको बार-बार प्रशासित करने पर एक से ही निष्कर्ष प्राप्त हों।

'If refers to the consistency of measurement' अर्थात्, यदि किसी परीक्षा के परिणाम पुनर्परीक्षण के पश्चात् समान परिस्थितियों में एक समान बने रहते हैं तो उस परीक्षा को विश्वसनीय माना जाता है इस प्रकार किसी परीक्षा की विश्वसनीयता परीक्षा में न्यादर्श की मात्रा (Sample size) तथा अंकों की वस्तुनिष्ठता पर निर्भर करती है। विश्वसनीयता का सम्बन्ध मापन की यथार्थता से है। किसी भी प्रकार के मापन में कोई भी त्रुटि न हो सम्भव नहीं होता।

पाठ्यक्रम सम्बंधित उपलब्धियों का मापन करने का है, और छात्रों की उपलब्धि स्तर का मूल्यांकन समूह में स्तरीकरण के रूप में किया जाता है।

इन परीक्षणों के मूल्यांकन द्वारा छात्रों को सहायता प्रदान की जाती है जिससे वे यह अनुभव कर सकें कि कहाँ तक उन्होंने अपने उद्देश्यों की पूर्ति की है। इस इकाई में छात्र परीक्षण तथा मूल्यांकन का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

1.1 शैक्षिक परीक्षण का अर्थ (Meaning of Educational Testing)

शैक्षिक परीक्षण का तात्पर्य परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी विषय के पाठ्यक्रम के प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर, लिखित अथवा मौखिक रूप से देते हैं। परीक्षण किसी भी परीक्षा प्रणाली अथवा मूल्यांकन की सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा प्रभावी तकनीक है। परीक्षण द्वारा ही मूल्यांकन हेतु आँकड़े तथा सूचना प्राप्त की जाती है।

1.2 शैक्षिक परीक्षण का संदर्भ (Context of Educational Testing)

परीक्षण का निर्माण करना तथा सोद्देश्य तरीके से परीक्षण का प्रयोजन करना एक जिम्मेदारीपूर्ण कार्य है। एक उत्तम परीक्षण मानकीकृत होता है। के निर्माण कुछ निश्चित प्रक्रियाएँ होती हैं, जो आवश्यक होते हैं। परीक्षण के संदर्भ में निम्नलिखित तथ्यों का अध्ययन करेंगे।

1.2.1 परीक्षण की विशेषताएँ

1. सोद्देश्यपूर्णता (Purposiveness)–उत्तम परीक्षण की 'सोद्देश्यपूर्णता' एक मुख्य विशेषता है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी प्रकार की परीक्षा का निर्माण करने से पूर्व उसके विशिष्ट उद्देश्य (Specific objectives) निर्धारित कर लेने चाहिये। परीक्षा चाहे निदानात्मक है, उपलब्धि मापन हेतु है, व्यक्तित्व मापन हेतु अथवा बुद्धि मापन हेतु निर्मित की गई है, प्रत्येक के उद्देश्य भिन्न होंगे। इसी दृष्टि से एक उत्तम परीक्षण का निर्माण उसी स्थिति में सम्भव है जबकि हमारे पास कोई उद्देश्य, लक्ष्य अथवा समस्या हो। अमूर्त परिस्थितियों में परीक्षण की रचना कदापि सम्भव नहीं हो सकती क्योंकि परीक्षण तो सदैव ही उद्देश्य पूर्ति का एक साधन-मात्र है। जब हमारे समक्ष कोई उद्देश्य ही नहीं होंगे तो साधनों की क्या सार्थकता रह जायेगी। इसीलिये किसी भी परीक्षण की रचना करने से पूर्व समस्या, लक्ष्य या उद्देश्य के सम्बन्ध में निर्णय कर लेना आवश्यक हो जाता है।

2. व्यापकता (Comprehensiveness)–व्यापकता से तात्पर्य यह है कि परीक्षा जिस योग्यता का मापन करने के लिये बनायी गई है उस योग्यता के समस्त क्षेत्र तथा जिस पाठ्यक्रम पर आधारित हो उसके समस्त पहलुओं पर प्रश्न पूछे जायें। जितना अधिक कोई परीक्षण पाठ्यक्रम एवं उसके विभिन्न अंशों एवं क्षेत्रों से सम्बन्धित होगा उतना ही व्यापक कहलायेगा। इस प्रकार प्रश्नों की संख्या बहुत अधिक हो जायेगी। अत: यह आवश्यक है कि प्रश्न छोटे-छोटे होने चाहिये। व्यापकता के इस गुण के अन्तर्गत परीक्षण का वह प्रारुप आ जाता है जिसके द्वारा परीक्षण उस योग्यता (Trait) के विभिन्न पक्षों का मापन करने में समर्थ हो सकता है, जिसके मापन हेतु उसका निर्माण किया गया है। परीक्षण मात्र परीक्षार्थी के व्यवहार के एक ही पक्ष का मूल्यांकन न करे बल्कि जहाँ तक हो सके पूरे पाठ्यक्रम से सम्बन्धित हों।

3. मितव्ययता (Economical)–परीक्षण निर्माण करते समय परीक्षण निर्माता को यह अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि परीक्षण धन की दृष्टि से अनुसन्धानकर्ता के लिये महँगा सिद्ध न हो। परीक्षण निर्माता की यह कोशिश रहनी चाहिये कि परीक्षण अनावश्यक रूप से विस्तृत न हो जाये। परीक्षण के स्वरूप के अनुरुप जिन अति महत्वपूर्ण पदों के समावेश से परीक्षण उद्देश्यों की पूर्ति हो सके केवल उन्हीं पदों को परीक्षण में स्थान दिया जाना चाहिये। व्यर्थ के पदों को परीक्षण में सम्मिलित करके मात्र परीक्षण लम्बाई की औपचारिकता पूरी न की जाये। साथ ही, उत्तर प्रपत्र (Response Sheet) अत्यन्त कुशलतापूर्वक तैयार की जाये ताकि प्रपत्र अधिक विस्तृत न हो जाये। संक्षेप में, एक उत्तम परीक्षण समय एवं धन की दृष्टि से मितव्ययी होना चाहिये।

4. ग्राह्यता (Acceptability)–एक अच्छे परीक्षण में ग्राह्यता का गुण होना भी अनिवार्य है। ग्राह्यता से तात्पर्य है–किसी भी परीक्षण का उन व्यक्तियों पर तथा उन परिस्थितियों में सफलतापूर्वक प्रशासित किया जाना जिनको आधार बनाकर

(5) वैधता (Validity)–वैधता किसी भी परीक्षण का एक अत्यन्त आवश्यक गुण है क्योंकि जब तक कोई परीक्षण वैध नहीं है वह उपयोगी नहीं हो सकता।

"Validity means truthfulness or purposiveness of a test." इसका आशय यह है कि यदि कोई परीक्षण वही मापन करता है। जिसका मापन करने के लिये उसका निर्माण हुआ है तो वह परीक्षण वैध कहलाता है। प्रत्येक परीक्षा का निर्माण किसी न किसी प्रयोजन को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। यदि कोई परीक्षण किसी श्रेणी अथवा स्तर के विद्यार्थियों के लिये उसी विषय अथवा विशेषता का ही मापन करता है जिसके लिये उसका निर्माण किया गया है तो वह परीक्षा वैध (Valid) मानी जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि, "वैधता का अर्थ है वह कार्य कुशलता जिससे कोई परीक्षण उस तथ्य का मापन करता है जिसके लिये वह बनाया गया है।

नोट्स एक मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग व्यापकता से किया जा सकता है। मानकीकरण के अभाव में परीक्षण का कोई अर्थ नहीं होता, चाहे वह कितना ही अच्छा क्यूँ न बनाया गया हो। प्रक्रिया के अन्त में विभिन्न प्रकार के मानक स्थापित किये जाते हैं जो परीक्षण के उद्देश्यों के अनुरुप होते हैं।

1.2.2 परीक्षण के उद्देश्य

1. परीक्षण को अनुचित प्रयोग से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम परीक्षण के अभिप्राय (Purposes) निश्चित कर लिए जायें।

अभिप्राय (Purposes) उद्देश्यों (objectives) से भिन्न हैं। उद्देश्यों का सम्बन्ध पाठ्यवस्तु से होता है। अभिप्राय का अर्थ परीक्षण के प्रयोग से सम्बन्धित है यथा-परीक्षण चयन (Selection Test) के लिये है या निदान के लिये (Diagnostic Test) अथवा कक्षोन्नति (Promotion) के लिए है। चयन परीक्षण की पाठ्यवस्तु कठिन होगी क्योंकि हमें श्रेष्ठ 5% की तुलना करनी होगी जबकि निदानात्मक परीक्षण में किसी एक इकाई पाठ्यवस्तु के प्रत्येक शिक्षण बिन्दु पर अनेक विश्लेषणात्मक प्रश्न और कक्षोन्नति परीक्षण में समस्त पाठ्यक्रम को चुना जाता है।

2. उपयुक्त पाठ्यक्रम तथा उद्देश्यों का विश्लेषण–

(क) उपयुक्त पाठ्यक्रम निर्धारित करना (Selecting appropriate Content):परीक्षा सम्बन्धी उद्देश्य निश्चित कर लेने के पश्चात् परीक्षण निर्माता उपयुक्त पाठ्यक्रम का चयन करता है जिसके आधार पर वह परीक्षा का निर्माण कर सके एवं उन सभी उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके जो उसने पूर्व निश्चित किये हैं। परीक्षण निर्माता का एक मात्र उद्देश्य उपयुक्त पाठ्यक्रम चयन की दृष्टि से यह होना चाहिये कि जिस विषय सामग्री का समावेश वह करना चाहता है वह अधिक से अधिक वैध (Valid) बन सके। अंकगणित, बीजगणित तथा रेखागणित आदि विषयों में मानकीकृत परीक्षाओं का निर्माण अधिक आसानी से किया जा सकता है क्योंकि उनके शिक्षण के सामान्य अथवा विशिष्ट उद्देश्यों के विषय में कभी दो मत नहीं हो सकते। जिन विषयों में मात्र तथ्यों पर अधिक महत्त्व दिया जाता है उन विषयो में मानकीकृत परीक्षाओं का निर्माण आसानी से किया जा सकता है लेकिन जिन विषयों के ज्ञान के अंश दक्षतायें एवं परिणाम जिस सीमा तक अनिश्चित होते हैं उनमें प्रमापीकृत परीक्षाओं का निर्माण उतना ही कठिन हो जाता है क्योंकि उनका तन्मापीकरण (Validation) वैसा ही दुरुह एवं जटिल बन जाता है। परीक्षा के लिए चयनित पाठ्यक्रम सामान्य प्रकृति का ही होना चाहिये, किसी विद्यालय अथवा प्रदेश विशेष के लिए नहीं, क्योंकि प्रमापीकृत परीक्षाएँ कहीं भी प्रयोग में लायी जा सकती हैं।

(ख) उद्देश्य निर्धारित करना (Determining Objectives)–किसी भी परीक्षा का निर्माण करने से पूर्व परीक्षण निर्माता का सबसे प्रमुख उद्देश्य परीक्षा निर्माण का उद्देश्य निश्चित करना होता है ताकि उसी के अनुरूप उपयुक्त पाठ्यक्रम का चयन किया जा सके तथा प्रश्नों का निर्माण भी किया जा सके। उदाहरण के तौर पर, यदि हम गणित में किसी परीक्षण का निर्माण करना चाहते हैं, तो हमारे दो प्रमुख उद्देश्य हो सकते हैं। प्रथम, विद्यार्थी की तर्क शक्ति,

निरीक्षण शक्ति, विचार शक्ति आदि का मापन अथवा विषय सम्बन्धी अन्य कौशलों का ज्ञान तथा द्वितीय, गणित के मूल प्रत्ययों (basic fundamentals) सम्बन्धी तथ्यों का ज्ञान। इसी प्रकार विभिन्न विषयों के लिए अलग-अलग उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं तथा परीक्षण निष्पत्ति के मापन (Achievement Test) हेतु अथवा निदान (Diagnostic Test) हेतु है यह भी स्पष्ट होना चाहिए।

(ग) चयनित विषय-वस्तु का आलोचनात्मक विश्लेषण (Critical analysis of the Subject Matter to be tested)–यह देखने के लिये कि चयनित पाठ्य-वस्तु उस कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के छात्रों की दृष्टि से उपयुक्त है या नहीं जिनके लिए उस परीक्षा का निर्माण किया गया है, पाठ्यवस्तु की वैधता स्थापित की जाती है। एक अध्यापक उन छात्रों की योग्यता का मापन तो आसानी से कर सकता है जिनको वह पढ़ाता है लेकिन प्रमापीकृत परीक्षा का निर्माण करने वाला न तो यह जानता है कि जिन बालकों की योग्यता का मापन वह करना चाहता है उनके अध्यापकों ने किन-किन उद्देश्यों को लेकर उनका अध्यापन प्रारम्भ किया था और न ही यह जानता है कि किस विद्यालय में किस उप-विषय पर कितना समय दिया गया है। यहाँ यह कहने में तनिक भी सन्देह नहीं कि यदि अध्यापक अपनी परीक्षा को वैध बनाना चाहता है तो उसे उन उद्देश्यों तथा महत्वपूर्ण उप-विषयों का ज्ञान होना चाहिये। लेकिन वह अपनी परिसीमाओं को ध्यान में रखकर विषय-वस्तु के क्षेत्र का चुनाव उस कक्षा में पढ़ाई जाने वाली पुस्तकों, अध्यापकों द्वारा बनाये गये प्रश्न पत्रों एवं शिक्षा परिषदों द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों का विश्लेषण करने के पश्चात् ही करता है। यदि भाग्यवश विषय ऐसा हुआ जिसके उद्देश्य एवं शिक्षण परिणामों पर विषय के अधिकांश अध्यापक सहमत हों तो उस विषय-वस्तु का चुनाव अपेक्षाकृत सरल हो जाता है। चयनित पाठ्यवस्तु की वैधता तीन प्रकार की होती है– (*a*) पाठ्यक्रम की वैधता, (*b*) सांख्यिकीय वैधता तथा (*c*) मनोवैज्ञानिक एवं तर्कसंगत वैधता। पाठ्यक्रम वैधता के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि जिस कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के लिये परीक्षा बनाई गई है उसका निर्धारित पूरा पाठ्यक्रम परीक्षा में सम्मिलित कर लिया गया है अथवा नहीं। यदि पाठ्यवस्तु का कोई भाग ऐसा है जो उस कक्षा विशेष के पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं किया गया है तो उसे हटा देना चाहिये।

3. प्रश्नों की रचना (Construction of test-items)–परीक्षा के प्रश्नों की रचना करते समय यह ध्यान में रखना चाहिये कि प्रश्न पूरे पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व करें। साथ ही, प्रश्नों में वे सभी विशेषताएं होनी चाहिये जो एक अच्छे प्रश्न में होती हैं। प्रश्न की सबसे प्रमुख विशेषता उसका वस्तुनिष्ठ एवं विभेदकारी होना माना जाता है। इसके अतिरिक्त प्रश्नों की रचना करते समय निम्न बातों को भी ध्यान में रखना चाहिये–

(*a*) प्रश्नों के विभिन्न रूपों का समावेश किया जाये।

(*b*) प्रश्न-पत्र के प्रारम्भिक रूप में प्रश्नों की संख्या पर्याप्त रखी जाये क्योंकि बाद में बहुत से प्रश्न कठिनाई स्तर एवं वैधता एवं दृष्टि से उचित न पाये जाने पर प्रश्न-पत्र में से निकाल दिये जाते हैं।

(*c*) प्रश्नों की भाषा सरल, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिए। परीक्षार्थी को व्यर्थ में उलझाने का प्रयास न किया जाये।

(*d*) ऐसे प्रश्नों को न जाने दिया जाये जिनका उत्तर अनुमान से दिये जाने की सम्भावना हो।

(*e*) प्रश्नों का स्वरूप इस प्रकार निश्चित किया जाये ताकि छात्र-विशेष व्यक्तिगत तौर पर लाभ न उठा सके।

(*f*) परीक्षा के अन्तिम प्रारूप में प्रश्नों की संख्या न तो बहुत अधिक रखी जाये और न ही बहुत कम। प्रश्नों की संख्या कम रखने से परीक्षा की विश्वसनीयता प्रभावित होती है और अधिक रखने से छात्र को उबाऊ प्रतीत होती है।

1.2.3 परीक्षण का प्रारूप

प्रश्नों को प्रश्न पत्र के रूप में लिखकर उसे परीक्षण का रूप दिया जाता है। परीक्षार्थियों को निर्देशन, परीक्षण की कुंजी आदि को तैयार किया जाता है। अब यह परीक्षण प्रारम्भिक Try-out के लिए तैयार है।

5. प्रश्नों का चयन (Selection of test items)–परीक्षा का प्रारम्भिक प्रारूप (First try-out) तैयार हो जाने पर इस परीक्षा को प्रश्नों की छँटनी करने के लिये विद्यार्थियों के एक प्रतिनिध्यात्मक समूह (Representative sample) अथवा एक विशाल समूह पर प्रशासित किया जाता है। इस प्रारूप में यह निश्चित किया जाता है कि कौन से प्रश्न विभेदकारी हैं कौन से नहीं, सम्पूर्ण परीक्षा कहाँ तक विश्वसनीय, वैध, प्रयोज्य, व्यापक अथवा वस्तुनिष्ठ है। परीक्षा

नोट

लेने के बाद परीक्षार्थियों की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन किया जाता है तथा उनमें से उन प्रश्नों को छाँट लिया जाता है जिन्हें 75% या उससे अधिक परीक्षार्थियों ने सही किया है तथा जिन्हें 25% परीक्षार्थी भी सही हल नहीं कर पाये हैं। 17% वाले प्रश्न अत्यन्त सरल तथा 25% वाले प्रश्न अत्यन्त कठिन समझे जाते हैं। इनके अतिरिक्त, शेष प्रश्नों को सरल से कठिन के क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाता है।

6. प्रश्नों की वैधता निश्चित करना (Establishing Validity of test-items)–प्रश्न की वैधता की जाँच करने के लिए प्रश्न को तीन कसौटियों यथा-वस्तुनिष्ठता, स्तर एवं विभेदकारिता पर परखा जाता है। वस्तुनिष्ठता की दृष्टि से प्रश्न में निम्न तीन गुण निहित होने चाहिये–

(*a*) प्रश्न का केवल एक ही उत्तर ठीक होना चाहिये।

(*b*) प्रश्न का उत्तर प्रश्न में ही निहित नहीं होना चाहिये।

(*c*) प्रश्न की भाषा सरल, संक्षिप्त एवं स्पष्ट होनी चाहिये। परीक्षार्थी व्यर्थ में उलझन में न पड़े।

इसके अतिरिक्त, जहाँ प्रश्न की कठिनाई स्तर का सम्बन्ध है प्रश्न किसी भी कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के मानसिक स्तर के अनुकूल हों। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रश्न न तो बहुत सरल ही हों और न ही बहुत कठिन। विभेदकारिता की दृष्टि से प्रश्न इस प्रकार के होने चाहिये कि वे योग्य और अयोग्य बालक के बीच भेद कर सकें अर्थात्, जिन प्रश्नों का उत्तर योग्य बालक आसानी से दे देते हैं अयोग्य बालक उन्हीं प्रश्नों का ठीक उत्तर न दे पायें। जिन प्रश्नों में उपरोक्त गुणों का अभाव होता है उन्हें परीक्षा से निकाल दिया जाता है अथवा उचित संशोधन या परिवर्तन कर दिया जाता है। बचे हुए प्रश्नों को फिर से क्रम में लिख लिया जाता है। अन्त में जो शोधित स्वरूप प्राप्त होता है वही प्रामाणिक परीक्षा कहलाती है।

7. समानान्तर परीक्षा प्रारूप तैयार करना (Preparation of the parallel form of the test)–प्राय: सभी प्रमापीकृत परीक्षणों का एक समानान्तर प्रारूप भी तैयार किया जाता है जो आकार, रूप, कठिनाई स्तर एवं अन्य दृष्टियों से परीक्षण के मूल रूप के समरूप होता है। ऐसा इस उद्देश्य से किया जाता है कि यदि परीक्षार्थियों की पुन: परीक्षा लेने की आवश्यकता पड़े तो इस दूसरे समानान्तर प्रारूप का प्रयोग किया जा सके। एक ही परीक्षा को दो बार प्रशासित किया जाना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित प्रतीत नहीं होता। चूँकि, परीक्षा का समानान्तर प्रारूप भी तैयार करने में उतना ही समय, धन एवं परिश्रम लगता है जितना कि परीक्षा के मूल रूप को तैयार करने में, इस दृष्टि से सुविधा हेतु परीक्षा के मूल रूप को ही दो भागों में विभक्त (Split) कर लिया जाता है। इस कार्य के लिए जो सिद्धान्त प्रयोग में लाया जाता है उसके अनुसार सम्पूर्ण परीक्षा के सम प्रश्नों (Even number items) (जैसे 2, 4, 6, 8 आदि) को मूल रूप या प्रथम रूप तथा विषम प्रश्नों (Odd number) (जैसे 1, 3, 5, 7 आदि) को परीक्षा के समानान्तर प्रारूप या द्वितीय रूप में रख दिया जाता है। इस प्रकार परीक्षा के दोनों प्रारूपों में एक से ही कठिनाई स्तर के प्रश्न आ जायेंगे तथा उनका कठिनाई क्रम भी बना रहेगा।

8. मानक निर्धारण (Determining Test Norms)–जैसा कि प्रामापीकरण की परिभाषा से स्पष्ट है कि एक प्रमापीकृत परीक्षा वह होती है जिसके मानक निश्चित कर लिये गये हों इस दृष्टि से परीक्षा के प्रमापीकरण हेतु मुख्य मानक जैसे, आयु मानक (Age Norms), ग्रेड मानक (Grade Norms) तथा शतांशीय मानक (Percentile Norms) तैयार कर लिये जाते हैं। इन मानकों के अतिरिक्त कभी-कभी प्रामाणिक मानक (Standard Norms) स्थापित करने की भी आवश्यकता पड़ जाती है। यह मध्यांक मान ही उस कक्षा विशेष या आयु समूह के लिए सामान्य स्तर या मानक मान लिया जाता है। अब यदि कोई छात्र इस सामान्य स्तर से अधिक अंक प्राप्त करता है तो हम उसे बुद्धिमान कहेंगे और यदि वह इस सामान्य स्तर से कम अंक प्राप्त करता है तो हम उसे मन्द बुद्धि छात्र कहेंगें। मानक एक प्रकार की तालिका होती है जिसमें एक ओर आयु के अनुसार प्राप्त अंक तथा दूसरी ओर उन प्राप्त अंकों से सम्बन्धित बुद्धि-लब्धि अथवा साफल्य आयु दी रहती है। अब जब कभी हमें किसी बालक की बुद्धि अथवा योग्यता की परीक्षा करनी होती है तो उसे तत्सम्बन्धित बुद्धि अथवा साफल्य परीक्षा दे दी जाती है ओर उसके द्वारा प्राप्त अंकों को इन मानकों की सहायता से बुद्धि-लब्धि अथवा साफल्य आयु आदि में बदल लिया जाता है। आजकल शतांशीय

मानक (Precentile Norms) तैयार करना अधिक उपयुक्त समझा जाता है क्योंकि इन मानकों से यह आसानी से ज्ञात हो जाता है कि अमुक परीक्षार्थी की समूह में क्या स्थिति है।

9. परीक्षा का अन्तिम प्रारूप (Final form of the test)–परीक्षा को अन्तिम प्रारूप दिये जाने के बाद सम्पूर्ण परीक्षा की एक बार पुन: वैधता एवं विश्वसनीयता ज्ञात की जाती है। परीक्षा की वैधता किसी उपयुक्त कसौटी (criterion) के आधार पर स्थापित की जाती है, तथा विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए निम्न प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है–

(*a*) परीक्षण पुनर्परीक्षण विधि (Test-Retest Method)

(*b*) अर्ध-विटापन विधि (Split Half Method)

(*c*) समानान्तर प्रारूप विधि (Parallel form Method)

(*d*) कूड रिचर्डसन फार्मूला (K-R Formula)

10. परीक्षण सामग्री छपाई (Printing Test Material)–परीक्षण का अन्तिम रूप निश्चित हो जाने पर समस्त सम्बन्धित सामग्री छपवा ली जाती है। परीक्षण का विस्तृत ब्यौरा परीक्षण मैनुअल (Test-manual) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह मैनुअल प्रत्येक प्रामाणिक परीक्षण का एक अभिन्न तथा आवश्यक अंग समझा जाता है। इसके अन्तर्गत परीक्षा पुस्तिका की छपाई, मुखपृष्ठ पर आवश्यक निर्देश, परीक्षा की प्रकृति, उत्तर देने का ढंग, परीक्षा के लिए निर्धारित समय, फलांकन कुंजी, परीक्षक के लिये निर्देश पुस्तिका (परीक्षा किस प्रकार लेनी है, परीक्षार्थियों को क्या-क्या निर्देश देने हैं, परीक्षा में क्या-क्या सावधानियाँ बरतनी हैं, परीक्षा का मूल्यांकन किस प्रकार करना है, परीक्षाफल की व्याख्या किस प्रकार करनी है आदि) तथा मानक आदि सम्मिलित किये जाते हैं। मानकों को अलग से या निर्देश पुस्तिका में ही छपवा दिया जाता है।

क्या आप जानते हैं प्रमापीकृत परीक्षाओं में आयु मानक तथा उपलब्धि परीक्षणों (Achievement Test) में ग्रेड मानक तथा शतांशीय मानक तैयार किये जाते हैं। मानक तैयार करने के लिए किसी कक्षा विशेष अथवा आयु समूह के लिए एक परीक्षा तैयार की जाती है फिर इस परीक्षा को उस कक्षा के समस्त विद्यार्थियों पर प्रशासित करके विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों का मध्यमान ज्ञात कर लिया है।

1.2.4 परीक्षाओं के गुण (Merits of Standaridized Test)

मानकीकृत परीक्षाओं के प्रमुख गुण निम्न हैं–

1. तुलनात्मक अध्ययन में इन सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।
2. ये परीक्षाएँ छात्र का शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग-दर्शन करने में सहायक होती हैं।
3. इन परीक्षाओं के माध्यम से छात्र को अपनी कमजोरियों एवं क्षमताओं का आभास आसानी से हो जाता है।
4. इन परीक्षाओं के आधार पर किसी छात्र की विभिन्न विषयों की उपलब्धियों में सहसम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है।
5. ये परीक्षाएँ विद्यार्थियों का वर्गीकरण करने में सहायक होती हैं।
6. ये परीक्षाएँ कक्षा सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के हल करने में अथवा विद्यार्थियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने में अध्यापक की सहायता करती हैं।
7. ये परीक्षाएँ छात्र के व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से परीक्षण करती हैं।
8. ये परीक्षाएँ विभिन्न विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों अथवा एक ही कक्षा में पढ़ने वाले लड़के एवं लड़कियों की बुद्धि अथवा योग्यता में विभेद करने में सहायक होती हैं।

9. इन परीक्षाओं की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इन्हें कहीं भी और किसी भी समय प्रशासित किया जा सकता है। तथा प्राप्त परिणामों की विश्वसनीयता बनी रहती है।

"Most teachers prefer standardized test that differ from their own informal examinations only in that they are provided with norms and that they are more reliable, more objective, more easily scored, more highly refined technically than their own product." *-Lindquist*

1.2.5 अधिगम मापन परीक्षाएँ (Tests for Measuring Learing)

अधिगम मापने के लिये कई प्रकार की निष्पत्ति परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है। निम्नलिखित पंक्तियों में हम प्रमुख निष्पत्ति परीक्षाओं पर प्रकाश डाल रहे हैं–

(*b*) मौखिक परीक्षायें (Verbal Test)–मौखिक परीक्षाओं का उद्देश्य विद्यार्थियों की मौखिक प्रश्नों द्वारा तुरन्त अभिव्यक्ति तथा क्रियाशीलता की जाँच करना है। इन परीक्षाओं का प्रयोग पहले तो छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये ही किया जाता था परन्तु आजकल इनका प्रयोग बड़ी कक्षाओं में प्रवेश, साक्षात्कार तथा वाइवा-वोसी के लिये भी किया जाता है।

मौखिक परीक्षाओं का प्रयोग विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान, तथ्यों के ज्ञान के प्रत्यास्मरण (Recall), लिखित परीक्षा की पूर्ति तथा उनके उच्चारण की योग्यता एवं व्यक्तिगत गुणों का मापन करने के लिये किया जाता है। इन परीक्षाओं के निम्नलिखित दोष हैं–

(*i*) इनके द्वारा लज्जाशील विद्यार्थी अपने ज्ञान तथा योग्यता का प्रदर्शन नहीं कर पाते।

(*ii*) इनके परिणामों में आत्मनिष्ठता (Subjectivity) की मात्रा अधिक होती है।

(*iii*) इनका कोई लिखित प्रमाण नहीं होता। अत: अंक प्रदान करने में शिक्षक मनमानी कर सकता है।

(*iv*) ये परीक्षाएँ प्रत्येक विद्यार्थी के लिये न्याय संगत नहीं है।

लिखित परीक्षायें (Written Tests)–लिखित परीक्षायें दो प्रकार की होती हैं–(*i*) निबन्धात्मक तथा (*ii*) वस्तुनिष्ठ। उक्त दोनों प्रकार की परीक्षाओं के सम्बन्ध में हम इसी अध्याय में आगे चलकर प्रकाश डाल रहें है।

प्रयोगात्मक परीक्षायें (Practical Test)–प्रयोगात्मक परीक्षाओं में विद्यार्थी किसी निर्धारित कार्य को प्रयोग द्वारा पूरा करते हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग रसायन-शास्त्र तथा भौतिक शास्त्र एवं भूगोल आदि में होता है।

कौशल प्रदर्शन परीक्षायें (Performance Tests)–कौशल प्रदर्शन परीक्षाओं में विद्यार्थी लिखकर उत्तर नहीं देते वरन् वे अपने विषय की योग्यता का परिचय किसी कार्य को करके देते हैं। इस प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग संगीत, कला तथा विज्ञान आदि विषयों में विशेष रूप से किया जाता है।

(*c*) निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay Type Tests): निबन्धात्मक परीक्षाओं का अर्थ (Meaning of Essay Type Tests)–निबन्धात्मक परीक्षाओं का तात्पर्य ऐसी परीक्षा प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत विद्यार्थी पाठ्य-क्रम के कई प्रश्नों के उत्तर निश्चित समय के अन्दर निबन्ध के रूप में देते है। इन परीक्षाओं में प्रश्नों के उत्तर इतने लम्बे होते हैं कि परीक्षक विद्यार्थियों को विचार, तुलना, अभिव्यंजन, तर्क तथा आलोचना आदि शक्तियों के साथ-साथ विचारों को संगठित करने की योग्यता तथा भाषा एवं शैली का मापन भली-भाँति कर सकता है। स्मरण रहे कि प्रत्यास्मरण (Recall) तथा पहचान (Recognition) स्तर पर विद्यार्थियों की निष्पत्ति का मापन वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के द्वारा अवश्य किया जा सकता है परन्तु निर्वाचन (Interpretation), प्रयोग (Application) तथा मूल्यांकन (Evaluation) स्तर पर निबन्धात्मक परीक्षा का प्रयोग करना परम आवश्यक है।

(*d*) निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण (Merits of Essay Type Tests)निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण निम्नलिखित हैं–

(*i*) **सरल निर्माण** (Essay Construction)–निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र छोटे होते हैं। इनके बनाने में किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं पड़ती। इन्हें बहुत ही कम समय में बनाकर थोड़े खर्चे में छपवाया जा सकता है।

(*ii*) **सभी विषयों के लिये उपयुक्त** (Suitable for all Subjects)–इन परीक्षाओं का प्रयोग प्रत्येक विषय के मापन के लिये किया जा सकता है। कुछ ही ऐसी योग्यतायें तथा कौशल हैं जिनके मापन के लिये वस्तुनिष्ठ परीक्षायें आवश्यक हैं अन्यथा ये पाठ्यक्रम के प्रत्येक विषय के मापन हेतु उपयुक्त हैं।

(*iii*) **अध्ययन करने की अच्छी आदत का विकास** (Development of Good Study Habits)–ये परीक्षायें विद्यार्थियों में प्रत्येक पाठ की रूपरेखा बनाने तथा ज्ञान के विभिन्न अंगों में सम्बन्ध स्थापित करने के लिये ऐसी प्रवृत्तियों को प्रेरणा देती है जो उनके लिये लाभदायक सिद्ध होती है। इससे विद्यार्थियों में अच्छी आदत का विकास होता है।

(*iv*) **मानसिक योग्यताओं का मापन** (Measurement of Mental Abilities)–विद्यार्थियों की विचार, तर्क, अभिव्यंजन तथा आलोचना आदि मानसिक योग्यताओं का मापन केवल निबन्धात्मक परीक्षाओं द्वारा ही सम्भव है, वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं द्वारा नहीं। स्पष्ट है कि ये परीक्षायें विद्यार्थियों की मानसिक योग्यताओं तथा शक्तियों के मापन में पूर्णरूपेण सिद्ध होती है।

(*v*) **तथ्यों का दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग** (Test Application of Knowledge in Different Spheres)–इन परीक्षाओं के प्रश्न वर्णन करो, स्पष्ट करों, विवेचना करो, समालोचना करो तथा कारण बताओ आदि से आरम्भ होते हैं। इससे विद्यार्थी जहाँ एक और तथ्यों का वर्णन करते हैं वहीं दूसरी ओर वे उनको दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग करना भी सीख जाते हैं। इससे इस बात का मापन आसानी से किया जा सकता है कि विद्यार्थी तथ्यों का वर्णन करने के साथ-साथ उन्हें दूसरी परिस्थितियों में कैसे प्रयोग करते हैं।

(*vi*) **भाषा तथा शैली में सुधार निश्चित** (Definite Improvement in Language and Style)–इन परीक्षाओं मे विद्यार्थियों को भाषा के लिखने पर अधिक बल दिया जाता है। इससे उनकी भाषा तथा शैली में सुधार होना निश्चित है। यह बात वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं द्वारा सम्भव नहीं है।

(*vii*) **शिक्षक की कुशलता का मापन** (Measurement of Teacher's Efficiency)–इन परीक्षाओं द्वारा जहाँ एक और विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों का मापन होता है, वहाँ दूसरी और इनके द्वारा शिक्षक की शिक्षण योजना, कुशलता एवं पटुता का मापन भी सरलतापूर्वक हो जाता है।

(*viii*) **सुविधाजनक** (Convenient)–इन परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने तथा प्रश्नों को जाँचने में किसी विशेष योग्यता परिश्रम की आवश्यकता नहीं होती। यही नहीं, इन परीक्षाओं में कोई ऐसे विशेष निर्देश भी नहीं होते जिन्हें विद्यार्थी न समझ सकें। इस दृष्टि से निबन्धात्मक परीक्षायें शिक्षकों तथा विद्यार्थियों दोनों के लिये सुविधाजनक है।

(*ix*) **उत्तर की स्वतन्त्रता** (Freedom of Response)–इन परीक्षाओं में विद्यार्थियों को अपने विचारों की तर्क पूर्ण ढंग से व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में विद्यार्थियों की तर्क-वितर्क करने की स्वतन्त्रता नहीं होती।

(*x*) **समय, श्रम तथा धन की मितव्ययिता** (Economy of Time Labour and Money)–इन परीक्षाओं का मूल्यांकन एक ही समय में होता है। उनकी उत्तर-पुस्तिकओं का मापन भी एक ही साथ होता है। साथ ही उनकी सफलता तथा असफलता के सम्बन्ध में बिना किसी कठिनाई के भविष्यवाणी भी की जा सकती है। उक्त सभी बातों में समय, श्रम तथा धन की मितव्ययिता होती है।

1.3 शैक्षिक परीक्षण की समस्याएँ (Issues of Educational Testing)

उपर्युक्त गुणों के होते हुये भी निबन्धात्मक परीक्षायें विद्यार्थियों की सभी निष्पत्तियों का मापन नहीं कर पातीं। निम्नलिखित पंक्तियों में हम इन परीक्षाओं के दोषों पर प्रकाश डाल रहे हैं–

(*i*) **स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी** (Lack of Clearly Defined Objectives)– परीक्षाओं में स्पष्ट परिभाषित उद्देश्यों की कमी होती है। विद्यार्थी इस बात को अन्त तक नहीं समझ पाते कि परीक्षक महोदय आखिर किस चीज का मापन करना चाहते हैं।

(*ii*) **उचित नमूनाकरण की कमी** (Lack of Proper Sampling)–परीक्षाओं में पाठ्यक्रम के कुछ ही अंशों पर पाँच से लेकर दस प्रश्न ही पूछे जाते हैं। दूसरे शब्दों में पचास प्रतिशत पाठ्यक्रम से प्रश्न पूछे ही नहीं जाते। इस अपर्याप्त नमूनाकरण से विद्यार्थियों के विकास का उचित मूल्यांकन नहीं हो पाता।

(*iii*) **रटने पर बल** (Emphasis on Cramming)–परीक्षाओं में कुछ खास-खास प्रश्नों को ही पूछा जाता है। अत: विद्यार्थी पूरे पाठ्यक्रम को तैयार न करके उसकी कुछ मुख्य-मुख्य बातों को ही रटने का प्रयास करते हैं। यह इन परीक्षाओं का बहुत बड़ा दोष है।

(*iv*) **उद्दीपन की कमी** (Lack of Incentive)–परीक्षाओं में उद्दीपन की बहुत कमी होती है। विद्यार्थियों को प्राय: ऐसी सामग्री रटनी पड़ती है जिसका उनके वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस कमी के कारण विद्यार्थियों में सीखने की प्रवृत्ति विकसित नहीं होती।

(*v*) **लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल** (More Emphasis on Speed and Style of writing)–वर्तमान परीक्षण प्रणाली में लिखने की गति एवं शैली पर अधिक बल दिया जाता है। जिन विद्यार्थियों का लेख सुन्दर होता है तथा जो तीव्र गति के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से प्रश्नों का उत्तर लिख देते हैं, उन्हें अधिक अंक मिल जाते हैं। इसके विपरीत जो विद्यार्थी तथ्यों का सम्पूर्ण ज्ञान रखते हुये भी अपने विचारों को सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण शैली में तीव्र गति से व्यक्त नहीं कर पाते उन्हें बहुत कम अंक दिये जाते है।

(*vi*) **अंक प्रदान करने में आत्मनिष्ठता** (Subjectivity in Awarding Marks)–परीक्षाओं में परीक्षक की आत्मनिष्ठता अधिक होती है। अत: अंकों में अनिश्चितता तथा विविधता बनी रहती है। चूँकि इन परीक्षाओं में परीक्षक की रुचि, योग्यता तथा मूड के साथ उसके मानसिक दृष्टिकोण का गहरा प्रभाव पड़ता है, इसलिये यदि किसी प्रश्न को उसी परीक्षक से पुन: जँचवाया जाये तो प्राप्तांकों में आकाश और पाताल का अन्तर मिलता है।

(*vii*) **वैधता की कमी** (Lack of Validity)–परीक्षायें विद्यार्थियों की भाषा, शैली, गति लेख तथा रटने की शक्ति का मापन करती हैं। चूँकि परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की उस शक्ति का उचित मापन नहीं हो पाता जिसको परीक्षक मापना चाहता है, इसलिये परीक्षाओं में वैधता का अभाव होता है।

(*viii*) **विश्वसनीयता की कमी** (Lack of Reliability)–परीक्षाओं द्वारा प्राप्त किये हुए अंकों में विचलन (Variation) होता रहता है तथा इन के परिणाम भी सदैव एक से नहीं रहते। इसलिये इन परीक्षाओं में विश्वसनीयता की बहुत कमी होती है।

(*ix*) **भविष्यवाणी की कमी** (Lack of Predictability)–निबन्धात्मक परीक्षाओं में अंकों का प्राप्त करना विद्यार्थियों के रटने की शक्ति पर निर्भर करता है। अत: इन परीक्षाओं के परिणामों के आधार पर यह भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने वाला विद्यार्थी सामान्य ज्ञान तथा व्यवहार में भी प्रथम ही होगा।

(*x*) **शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में बाधा** (Interference in Mental and Physical Health)–परीक्षायें विद्यार्थियों के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में बाधा है। इसका कारण यह है कि इन परीक्षाओं को देने के लिये विद्यार्थी परीक्षा से केवल एक अथवा दो महीने पहले ही पढ़ना आरम्भ करते हैं। इससे उनका शारीरिक स्वास्थ्य तो खराब हो ही जाता है, वे मानसिक संघर्ष की चक्की में भी पिसते रहते है।

(*xi*) **अपूर्ण उत्तरों को पूर्ण उत्तर समझना** (Incomplete Answers Appearing as Complete)– परीक्षाओं में विद्यार्थी अपने परीक्षक को धोखा दे सकते हैं। प्राय: देखा गया है कि जब किसी चतुर विद्यार्थी को किसी प्रश्न का उत्तर पूरी तरह याद नहीं होता तो वह उस प्रश्न का उत्तर ऐसा घुमा फिरा कर परिमार्जित भाषा तथा प्रभावपूर्ण शैली में लिखता है कि परीक्षक महोदय को पूर्ण मालूम देता है और वे उस उत्तर पर अंक भी खासे दे देते हैं।

(*xii*) **मूल्यांकन मे कठिनाई** (Difficulty in Evaluation)–इन परीक्षाओं द्वारा उचित मूल्यांकन सम्भव नहीं है। अभी तक कोई ऐसा निश्चित माप दण्ड नहीं बनाया गया जो विद्यार्थियों की प्रगति का उचित मूल्यांकन कर सके।

1.4 शैक्षिक परीक्षण की नवीनतम प्रवृत्तियाँ (Current Trends in Testing)

मापन की प्रक्रिया में किसी गुण/चर को अंकों, संकेतों, चिन्हों तथा अनुस्थितियों में बदल लेते हैं जिससे परिमाण में आक लेते हैं। अधिकांश मापन की प्रक्रिया में गुणों/चरों को अंकों में बदल लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्तांकों की सांख्यिकी विश्लेषण से मानकों का रूपान्तरण कर लेते हैं। जिनका अर्थापन सुगमता से किया जाता है। मानकों के अध्याय में जो प्रकार एवं सांख्यिकी प्रविधियाँ दी गई है उनमें अंकों (Score) को महत्व दिया गया है। परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में निष्पत्ति के मापन में अंकों तथा अनुस्थितियों (Grades) को भी दिया जाता है। शिक्षा की मापन की प्रक्रिया में अनुस्थितियों को भी अधिक महत्व दिया जाने लगा है यहाँ तक परीक्षा बोर्ड अंक तालिका में ग्रेडस को अंकित करते है और उनके अर्थापन के लिये मापनी भी देते है।

इनके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार से परीक्षण प्रणाली में सुधार लाने का प्रयत्न किया जा रहा हैं जो निम्नलिखित है–

(अ) प्रश्न-पत्र बनाने में सुधार (Improvement in the Construction of Test Papers)

निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्र बनाने में निम्नलिखित सुधार होने चाहिए–

(*i*) **अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति** (Achievement of Learning Objectives)–निबन्धात्मक परीक्षाओं के प्रश्न-पत्रों को बनाते समय परीक्षकों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि प्रत्येक प्रश्न अधिगम के किसी न किसी उद्देश्य का मापन अवश्य करे। दूसरे शब्दों में परीक्षकों को प्रश्न-पत्र में केवल उन्हीं प्रश्नों को देना चाहिये जिनके द्वारा अधिगम के उद्देश्य प्राप्त हो जायें।

(*ii*) **पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व** (Full Representation of Curriculum)–प्रश्न-पत्र में पाठ्यक्रम का पूर्ण प्रतिनिधित्व होना चाहिये। दूसरे शब्दों में प्रश्न-पत्र के अन्दर पाठ्यक्रम के प्रत्येक प्रसंग पर प्रश्न पूछने चाहिये।

(*iii*) **प्रश्नों की प्रकृति** (Nature of Questions)–प्रश्न, सरल, सीधे तथा प्रत्यक्ष होने चाहिये। उनकी भाषा विद्यार्थियों के मानसिक स्तर के अनुसार होनी चाहिये। यही नहीं, उन्हें विद्यार्थियों की मौलिकता तथा रचनात्मक प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहित करना चाहियें।

(*iv*) **कठिनाई स्तर पर बल** (Emphasis on Difficulty Level)–प्रश्न-पत्र में मन्द, औसत तथा प्रखर बुद्धि वाले हर प्रकार के विद्यार्थियों के लिये क्रमशः सरल, औसत तथा कठिन प्रश्नों की व्यवस्था होनी चाहिए। इससे प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार प्रश्न हल करने को मिल जायेंगे।

(*v*) **विकल्प प्रश्नों को महत्व नहीं** (No Importance to Alternate Questions)–प्रश्न-पत्रों में विकल्प प्रश्नो को महत्व देना मापन की त्रुटिपूर्ण एवं अशुद्ध करना है। अतः प्रश्न-पत्र में या तो प्रश्न अनिवार्य होने चाहियें या किसी कारणवश विकल्प प्रश्न पूछे ही जायें तो वे एक ही प्रश्न के अन्तर्गत रखे जायें।

(*vi*) **प्रश्नों की संख्या** (Number of Questions)–प्रश्न-पत्र में प्रश्नों की संख्या न बहुत कम होनी चाहिये और न बहुत अधिक। पर हाँ, इतने प्रश्न अवश्य होने चाहिये कि विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों तथा निर्धारित पाठ्यक्रम का मापन ठीक प्रकार से हो जाये।

(*i*) **कक्षोन्नति के ढंग में परिवर्तन** (Change in the Method of Promotion)–प्रत्येक कक्षा में साप्ताहिक तथा मासिक परीक्षायें होनी चाहिये। इन परीक्षाओं में होने वाली प्रगति के आधार पर विद्यार्थी जो भी अंक प्राप्त करें उन्हें अर्द्ध वार्षिक तथा वार्षिक परीक्षाओं में जोड़ देना चाहिए।

(*iii*) **मौखिक परीक्षाओं की व्यवस्था** (Provision of Verbal Test)–निबन्धात्मक परीक्षाओं के साथ-साथ विद्यार्थियों की मौखिक परीक्षाएँ भी होनी चाहिए। इससे उनकी योग्यता तथा क्षमता के मापन में सहायता मिलेगी।

(*iii*) **दो परीक्षकों की नियुक्ति** (Appointment of two Examiners)–विद्यार्थियों की मौखिक परीक्षा के लिये कम से कम दो कुशल शिक्षकों की नियुक्ति होनी चाहिये। इससे आत्मनिष्ठता (Subjectivity) का दोष कम हो जायेगा और मापन ठीक प्रकार से हो सकेगा।

(स) उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन में सुधार (Improvement in the Evaluation of Scripts)

उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन की वर्तमान विधि से अंकों की विविधता को प्रोत्साहन मिलता है। इस दोषपूर्ण विधि में ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता है। जिससे उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन अधिक से अधिक वैज्ञानिक तथा वस्तुनिष्ठ बन जाये। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं–

(*i*) **प्रश्नों के लिये उद्देश्यों का ज्ञान** (Knowledge of the Objectives of Questions)–विद्यार्थी तथा परीक्षक दोनों को प्रश्न-पत्र में पूछे गये प्रश्नों के उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिये।

(*ii*) **मूल्यांकन के लिये निश्चित नियमों की तैयारी करना** (Preparation of Definie Rules for the Evaluatin of Questions)–उत्तर पुस्तकों का मूल्यांकन करने से पहले प्रधान परीक्षक (Head Examiner) को प्रत्येक प्रश्न के सम्बन्ध में निश्चित नियम तैयार करने चाहिये जिनके अनुसार सहायक परीक्षक उत्तर पुस्तकों का स्पष्ट अंकन विधि द्वारा उचित मूल्यांकन करें।

(*iii*) **केन्द्रीय मूल्यांकन की व्यवस्था** (Provision of Central Evaluation)–उत्तर पुस्तकों को मूल्यांकन हेतु परीक्षकों के घर नहीं भेजना चाहिये। इन महान कार्यों को पूरा करने के लिये केन्द्रीय मूल्यांकन की व्यवस्था की जानी चाहिये।

(*iv*) **समस्त प्रश्नों के आदर्श उत्तर तैयार करना** (Preparing Ideal Answers of all Questions)–केन्द्र पर उत्तर पुस्तकों के मूल्यांकन हेतु जिन योग्य परीक्षकों की नियुक्ति की जाये वे परीक्षक कार्य आरम्भ करने से पहले समस्त प्रश्नों के आदर्श उत्तर तैयार करें।

(*v*) **प्रश्नों का बाँटना** (Distribution of Questions)–परीक्षकों को मूल्यांकन हेतु, उत्तर पुस्तकें न बाँट कर प्रश्न बाँटे जायें। इससे अंकों की विविधता पर नियन्त्रण हो जायेगा।

(*vi*) **एक समय में केवल एक प्रश्न का मूल्यांकन** (Evaluation of only One Question at a Time)–परीक्षक को चाहिये कि वह दूसरे प्रश्नों का मूल्यांकन करने से पहले प्रथम प्रश्न को समस्त उत्तर पुस्तकों में जाँचे। इससे दो लाभ होंगे। पहला यह कि परीक्षक प्रश्नों की तुलना करके श्रेणीबद्ध कर सकेगा तथा दूसरा यह कि

परीक्षक के मस्तिक में एक ही प्रकार का उत्तर रहेगा। इससे जहाँ एक और कार्य सरल हो जायेगा वहाँ दूसरी और मूल्यांकन भी शुद्ध हो जायेगा।

(*vii*) **श्रेणी-विधि का प्रयोग** (Use of Grading of Rating Method)–परीक्षक को चाहिये कि वह सारी उत्तर पुस्तकों को एक बार सरसरी तौर से पढ़े। इसके पश्चात् उन्हें पाँच श्रेणियों में विभाजित करे। वे श्रेणी हैं– अति उत्तम तथा 10% निकृष्ट स्तर की हों, 20% उत्तम तथा 20% सामान्य से नीचे स्तर की हों एवं 40% सामान्य स्तर की हों। इस विधि का प्रयोग करते समय उत्तर पुस्तकों पर अंकों के स्थान पर अ, ब स आदि अक्षर अंक प्रदान करने चाहिये।

क्या आप जानते हैं सबसे पहले वस्तुनिष्ठ परीक्षा का लिखित रूप में निर्माण होरासमैन (ध्वतंबम डंदद) ने सन् 1854 ई. में किया था। इसके पश्चात् जार्ज फिशर (George Fisher), जे. एम. राइस (J. M. Rice) तथा स्टार्च (Starch) एवं थारनडाइक (Thorndike) आदि विद्वानों ने शैक्षिणिक निष्पत्ति के मापन हेतु सैकड़ों वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ बनाई और अब भी विद्यार्थियों के प्रत्येक क्षेत्र के विकास को मापने के लिये विभिन्न प्रकार की वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रयोग किया जा रहा है।

(*i*) **कठिन निर्माण** (Difficult Construction)–वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में प्रश्नों की संख्या सौ से लेकर दो सौ तक होती है। इन प्रश्नों का निर्माण केवल योग्य, अनुभवी तथा कुशल शिक्षक ही कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में इन परीक्षाओं के प्रश्नों का निर्माण बहुत कठिन होता है।

(*ii*) **अध्यापन की प्रामाणिता** (Standerdization of Instruction)–इन परीक्षाओं के द्वारा विद्यार्थियों की चिन्तन, मनन तथा तर्क आदि शक्तियों को विकसित करने की अपेक्षा शिक्षण नीति में समानता लाने का प्रयास किया जाता है। इससे वैयक्तिक विभिन्नता के सिद्धान्त की अवहेलना होती है जिसके परिणामस्वरूप मानसिक क्रिया यान्त्रिक बन जाती है।

(*iii*) **विचार संगठन का अभाव** (Lack of Organization of Thought)–इन परीक्षाओं में विद्यार्थी छोटे-छोटे प्रश्नों के उत्तर देते हैं। इससे उनमें न तो कल्पना तथा मौलिक चिन्तन का विकास होता है और न ही वे अपने विचारों को क्रमिक रूप में संगठित कर पाते हैं।

(*iv*) **मानसिक योग्यताओं के मूल्यांकन की कठिनाई** (Difficulty of Measuring Mental Abilities)–निबन्धात्मक परीक्षाओं में विद्यार्थियों को विचार तर्क, अभिव्यंजन तथा आलोचना आदि मानसिक योग्यताओं का मापन सरलतापूर्वक किया जा सकता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में उक्त मानसिक योग्यताओं का मापन नहीं किया जा सकता।

(*v*) **अधूरी सूचना** (Partial Information)–इन परीक्षाओं में प्रश्न बहुत छोटे-छोटे होते हैं। इनके उत्तरों को या तो चिन्हों में दिया जाता है अथवा एक या दो शब्दों में। इससे परीक्षक को विद्यार्थी के विषय में पूरी जानकारी नहीं हो पाती।

(*vi*) **आवश्यकता से अधिक सरल** (Over Simplification)–कभी-कभी ये परीक्षायें इतनी सरल होती हैं कि कमजोर से कमजोर विद्यार्थी भी इनके प्रश्नों का उत्तर बिल्कुल सही लिख देते हैं। इससे विद्यार्थियों के भविष्य का उचित मार्ग-दर्शन नहीं हो पाता।

(*vii*) **अनुमान तथा धोखा** (Guessing and Cheating)–इन परीक्षाओं के उत्तर देते समय विद्यार्थी अधिकतर अनुमान का सहारा लेते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वे परीक्षक को धोखा देकर अन्य विद्यार्थियों की उत्तर-पुस्तकों से नकल भी कर देते हैं।

(*viii*) **बहुत खर्चीली** (Very Costly)–इन परीक्षकों के प्रश्न-पत्रों को बनवाने तथा छपवाने में बहुत खर्चा होता है। हमारे स्कूलों की आर्थिक स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। अत: इन खर्चीली परीक्षाओं का प्रयोग सरलतापूर्वक नहीं किया जा सकता।

1.5 शैक्षिक मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Educational Assessment)

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिए प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जाँच की जाती है। मूल्यांकन शब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है तथा इसको कई प्रकार से परिभाषित भी किया गया है, '**क्वालेन** तथा **हन्ना**' की परिभाषा अधिक सार्थक प्रतीत होता है। उनके अनुसार, **"विद्यालय में हुए छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रदत्तों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।"**

"Evaluation is the processof gathering and interpreting evidence on changes in the behaviour of all students as they progress through school."

मूल्यांकन प्रक्रिया का सम्बन्ध शिक्षण के मापन और अधिगम के उद्देश्यों की प्राप्ति से होता है। परम्परागत प्रणाली में पाठ्यवस्तु तथा छात्रों की निष्पत्तियों को ही महत्व दिया जाता है। छात्रों की सफलता तथा असफलता का उत्तरदायित्व शिक्षक का न होकर उन्हीं का माना जाता है। इसलिए शिक्षण की प्रक्रिया में अधिक विकास एवं परिवर्तन नहीं हो सका है। मूल्यांकन प्रक्रिया अधिगम-उद्देश्यों की प्राप्ति के आधार पर अपनी शिक्षण-विधियों, प्रविधियों तथा सहायक सामग्री की उपादेयता का मूल्यांकन करती है, क्योंकि छात्रों की सफलता और असफलता के लिए अधिगम परिस्थितियाँ ही वास्तव में उत्तरदायी होती हैं, परन्तु अभी इस प्रक्रिया का उपयोग शिक्षा में पूरी तरह नहीं हो पा रहा है, क्योंकि मूल्यांकन के लिए शिक्षा एवं प्रशिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट नहीं हैं तथा शैक्षिक मापन अक्सर कठिन होता है।

1.6 शैक्षिक मूल्यांकन का संदर्भ (Context of Educational Assessment)

मूलयांकन की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।
2. मूल्यांकन प्रक्रिया से यह भी निश्चित किया जाता है कि किन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है ताकि समुचित उपचारात्मक अनुदेशन (Remedial Instruction) दिया जा सके।
3. कक्षा में छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण (Ranking) किया जा सकता है।
4. शिक्षक की विधियों तथा प्रविधियों की उपादेयता और उनकी कमजोरियों को भी ज्ञात किया जाता है।
5. शिक्षण-आव्यूह (Teaching strategy) में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्रोतों को हटाया भी जा सकता है।
6. मूल्यांकन-प्रक्रिया शिक्षक तथा छात्र दोनों के लिए पुनर्बलन का कार्य करती है।

इस प्रक्रिया में मानदण्ड-परीक्षा का महत्वपूर्ण कार्य होता है, जिससे छात्रों में व्यवहार-परिवर्तन की जाँच होती है, जिसके आधार पर शिक्षक को अपनी क्रियाओं के सुधार तथा विकास के लिए दिशा मिलती है।

मूल्यांकन की प्रविधियाँ (Techniques of Assessment)

मूल्याकन की प्रक्रिया ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में प्रदत्तों का संकलन करती है। परम्परागत परीक्षाओं से ज्ञानात्मक उद्देश्यों का ही मापन किया जाता है। मूल्यांकन की प्रक्रिया का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसमें अनेक प्रकार की प्रविधियाँ प्रयुक्त की जाती हैं।

1. ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिए मौखिक, लिखित, निबन्धात्मक परीक्षाएँ तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ एवं प्रयोगात्मक परीक्षाएँ उपयोग में लाई जाती हैं, इसमें निरीक्षण प्रविधि का भी प्रयोग करते हैं।
2. भावात्मक उद्देश्यों के लिए अभिरुचि सूची (Attitude Scale), रेटिंग तथा मूल्यों के परीक्षण (Values Test) आदि प्रयुक्त किये जाते हैं। निबन्धात्मक परीक्षाएँ भी आंशिक रूप से प्रयुक्त की जा सकती हैं। निरीक्षण-प्रविधि को भी प्रयोग में लाया जाता है।
3. क्रियात्मक उद्देश्यों के लिए प्रयोगात्मक परीक्षा अधिक उपयोगी मानी जाती है। इसमें छात्रों को कुछ क्रियाएँ करनी पड़ती हैं और उनके कौशल का मूल्यांकन किया जाता है।

मूल्यांकन में मानदण्ड परीक्षा को विशेष महत्व दिया जाता है। इसकी तीन प्रमुख विशेषताएँ होती हैं–

(अ) **समुचित (Appropriateness)**–मानदण्ड परीक्षा समुचित मानी जाती है, क्योंकि इसमें उद्देश्यों को विशेष महत्व दिया जाता है। परीक्षा के प्रश्न विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति मापन करते हैं।

(ब) **प्रभावशीलता (Effectiveness)**–मानदण्ड परीक्षा के मापन का कार्य भली प्रकार करना चाहिए। परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिए।

(स) **व्यावहारिकता (Practicability)**–मानदण्ड परीक्षा का प्रशासन सरल होना चाहिए। अंकन भी सरल हो तथा प्रदत्तों का अर्थापन सार्थक होना चाहिए। परीक्षा छात्रों तथा शिक्षकों को मान्य होनी चाहिए।

शिक्षण अनुदेशन के मूल्यांकन में प्रमुख रूप से मानदण्ड परीक्षा को प्रयुक्त किया जाता है। यदि मानदण्ड परीक्षा में छात्रों को अच्छे अंक (90/90 मानदण्ड) नहीं प्राप्त हुये तो यह इस बात का सूचक है कि अधिगम प्रक्रिया प्रभावशाली नहीं है। इसमें परिवर्तन तथा सुधार लाना चाहिए। इस प्रकार अनुदेशन अभिक्रमित की प्रभावशीलता के सम्बन्ध में निर्णय लिया जा सकता है। छात्रों की प्रतिक्रियाओं को एवं उनकी कमजोरियों को जानने के लिए भी मानदण्ड परीक्षा प्रयुक्त कर सकते हैं और उनमें सुधार ला सकते हैं।

मूल्यांकन प्रविधियों का वर्गीकरण (Classification of Assessment Techniques)

विद्यालयों में प्रयुक्त की जाने वाली सभी मूल्यांकन प्रविधियों को प्रमुख रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जाता है।–

(अ) परिमाणात्मक प्रविधि (Quantitiative Techniques) तथा

(ब) गुणात्मक प्रविधि (Qualitative Techniques)।

(अ) परिमाणात्मक परीक्षाएँ (Quantitative Examination)

मूल्यांकन में इस प्रकार की प्रविधियाँ अधिक उपयोगी, विश्वसनीय तथा वैध होती हैं। यह तीन प्रकार की होती हैं–

(1) मौखिक परीक्षा (Oral Examination),

(2) लिखित परीक्षा (Written Examination) तथा

(3) प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical Examination)।

(1) **मौखिक परीक्षा (Oral)**–इसमें मौखिक प्रश्न, वाद-विवाद प्रतियोगिता तथा नाटक आदि को प्रयुक्त किया जाता है।

(2) **लिखित परीक्षा (Written)**–इसमें प्रश्न लिखित रूप में पूछे जाते हैं, छात्रों को उनका उत्तर लिखना होता है। लिखित परीक्षाएँ दो प्रकार की होती हैं–

(क) निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay type test) तथा

(ख) वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ (Objective type test)।

(3) **प्रयोगात्मक परीक्षा (Practical)**–इसमें छात्रों को कोई निर्धारित कार्य पूरा करना होता है। विज्ञान, भूगोल, गृह विज्ञान, कला, क्राफ्ट आदि विषयों में इन्हें प्रयुक्त किया जाता है।

(ब) गुणात्मक परीक्षाएँ (Qualitative Tests)

विद्यालय में गुणात्मक परीक्षाओं का उपयोग आन्तरिक मूल्यांकन के लिए किया जाता है। यह साधारणत: पाँच प्रकार की होती है–

(1) संचयी आलेख (Cumulative Records)।

(2) एनेकडोटल आलेख (Anecdotal Records)।

(3) निरीक्षण (Observation)।

(4) जाँच-सूची (Check list) तथा

(5) अनुस्थिति मापनी (Rating Scale)

(1) संचयी आलेख (Cumulative Records)–विद्यालयों में प्रत्येक छात्र के सम्बन्ध में सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें शैक्षिक प्रगति, मासिक परीक्षा-फल, उपस्थिति, योग्यता तथा अन्य विद्यालयों की क्रियाओं में भाग लेने आदि का आलेख प्रस्तुत किया जाता है। छात्र की प्रगति तथा कमजोरियों को जानने के लिए अभिभावकों, शिक्षकों तथा प्रधानाचार्य के लिए अधिक उपयोगी आलेख होता है।

(2) एनेकडोटल आलेख (Anecdotal Records)–इनमें बालकों के व्यवहार से सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं तथा कार्यों का वर्णन किया जाता है। इन कार्यों तथा घटनाओं का आलेख सही रूप में किया जाता है। निरीक्षण करने वाले छात्र की रुचियों तथा झुकावों को उत्पन्न करने वाले घटकों का भी उल्लेख करता है, इनके आधार पर छात्र के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया जा सकता है और निर्देशन में इसे प्रयुक्त करते हैं।

(3) निरीक्षण (Observation)–इसका प्रयोग विशेष रूप से छोटे बालकों के मूल्यांकन के लिए किया जाता है, क्योंकि उनको अन्य कोई परीक्षा नहीं दी जा सकती है और उनके व्यवहार में वास्तविकता होती है। इसका प्रयोग उनकी योग्यता तथा व्यवहारों के सम्बन्ध में किया जाता है। उच्च कक्षाओं में छात्र स्वयं आत्मनिरीक्षण के लिए भी इसे प्रयोग करता है।

(4) जाँच सूची (Check-list)–लिखित तथा मौखिक परीक्षाएँ छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष की जाँच करती हैं और प्रयोगात्मक परीक्षाएँ कौशल तथा क्रियात्मक पक्ष की जाँच करती हैं। जाँच सूची का प्रयोग अभिरुचियों, अभिवृत्तियों तथा भावात्मक पक्ष के लिए किया जाता है। इसमें कुछ कथन दिये जाते हैं। उन कथनों के सम्बन्ध में छात्रों को 'हाँ' अथवा 'नहीं' में उत्तर अंकित करना होता है। इस प्रकार के कथनों की सूची की रचना करते समय उद्देश्य स्पष्ट होने चाहिए। प्रत्येक कथन को किसी विशिष्ट उद्देश्य का मापन करना चाहिए; जैसे–

(1) आपको शिक्षण-सोपानों का स्मरण करने में रुचि है। हाँ/नहीं

(2) आप पाठ योजना की रचना करने में रुचि लेते हैं। हाँ/नहीं

(3) आपको कक्षा-शिक्षण के प्रस्तुतीकरण में आनन्द मिलता है। हाँ/नहीं

(4) आपको छात्रों के कार्यों की प्रशंसा करना अच्छा लगता है। हाँ/नहीं

इस जाँच सूची से छात्राध्यापकों की शिक्षण में रुचि का मूल्यांकन किया जा सकता है। हाँ/नहीं

1.7 शैक्षिक मूल्यांकन की समस्याएँ (Issues of Educational Assessment)

परम्परागत अंकन प्रणाली (Traditional Marking)–साधारण परीक्षा में पूर्णांक 100 आवंटित किये जाते हैं। इसकी अवधारणा यह है कि छात्रों की क्षमताओं की 0 से 100 के पैमाने पर शुद्ध रूप में प्रदर्शित किया जाता है। मानवीय क्षमतायें तीन प्रकार की होती हैं–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक। इसलिए मापन में शुद्धता लाना असम्भव है। मानवीय योग्यताओं का मापन अधिक संवेदनशील है। इसलिए 0 से 100 के पैमाने पर शुद्धता नहीं लाई जा सकती है।

आर्थिक सम्भावित त्रुटि (High Probability Error)–उपरोक्त अवधारणा सही नहीं है, क्योंकि व्यावहारिक रूप

में दो प्रकार की त्रुटियाँ होती हैं–

(1) अंकन कर्त्ताओं की विषमता, तथा

(2) शिक्षण विषयों की विविधता

(1) अंकन कर्त्ताओं की विषमता (Evaluations Variability)–निबन्धात्मक परीक्षा में अंकनकर्ता की त्रुटि सबसे अधिक होती है। एक ही उत्तर पर एक परीक्षण प्रथम श्रेणी के अंक देता है और दूसरा परीक्षक तृतीय श्रेणी के अंक देता है तथा अन्य अनुत्तीर्ण के अंक देता है। इस सन्दर्भ में **हारपर** की **'नब्बे में दस'** का शोध कार्य अधिक प्रसिद्ध हैं। एक उत्तर-पुस्तिका को नब्बे परीक्षकों से अंकन करवा कर विश्लेषण किया था, जिसमें भारी विषमता प्राप्त हुई थी।

अन्य त्रुटि यह होती है कि 29 अंक में फेल होता है और 30 अंक में पास हो जाता है। इसी प्रकार 59 में द्वितीय श्रेणी ओर 60 में प्रथम श्रेणी दी जाती है। एक अंक तथा आधे अंक को कम या अधिक देने का क्या आधार है? इसका उत्तर परीक्षक नहीं दे सकता है। इसलिए वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं से इन त्रुटियों को दूर कर दिया जाता है, परन्तु निबन्धात्मक परीक्षाओं को समाप्त नहीं कर सकते हैं। इनकी अपनी विशेषताएँ तथा उपयोगिताएँ हैं।

(2) शिक्षण विषयों की विविधता (Subjects Variability)–परीक्षकों की त्रुटि के अतिरिक्त विषयों की विविधा का भी अंकन पर प्रभाव रहता है। गणित तथा विज्ञान विषयों के मूल्यांकन में अपेक्षाकृत शुद्धता होती है। सामाजिक विषयों, भाषाओं के उत्तरों के अंकन में शुद्धता कम होती है, जबकि सभी विषयों में 0 से 100 तक का पैमाना ही प्रयुक्त किया जाता है। गणित में 90 से अधिक अंक भी दिये जाते हैं, जबकि अन्य विषयों में 90 अंक कभी किसी क्षात्र के नहीं आते हैं। 0 से 100 के पैमाने पर प्रत्येक विषय में छात्रों के अंक वितरित होने चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता है। विज्ञान के विषयों में अधिकतर 60 से 80 अंक दिये जाते हैं। सामाजिक विषयों में 40 से 60 अंक दिये जाते हैं। इस प्रकार 0 से 100 पैमाने की सार्थकता विषयों से अलग होती है। सामाजिक विषयों में तथा भाषाओं में 50 से 60 अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को बहुत अच्छा माना जाता है, जबकि विज्ञान विषयों में 50 से 60 अंक प्राप्त करने वालों को सामान्य स्तर का माना जाता है। अत: 0 सं 100 पैमाने की अवधारणा सही प्रतीत नहीं होती है।

1.8 मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली की नवीनतम समस्याएँ (Current Trends of Present system of Education)

अनुस्थिति प्रणाली (Grading System): अनुस्थिति प्रणाली (Grading) वह साधन है, जिससे छात्रों के मापन को प्रदर्शित किया जाता है। यह आवश्यकता होती है कि छात्रों तथा अभिभावकों को यह बतला दें कि छात्र के सीखने का क्या स्तर है? छात्रों को जो अंक दिये जाते हैं, उससे यह जानकारी नहीं होती है।

दो छात्रों के अंकों से उनके अन्तर का सही ज्ञान नहीं होता है। एक परीक्षा में एक छात्र ने 50 में से 32 तथा दूसरे ने 25 अंक प्राप्त किए। दोनों छात्रों के अंकों के अन्तर से गुणात्मक अन्तर का बोध नहीं होता है। पहला दूसरे से अच्छा है, इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकते हैं। यदि छात्रों को अनुस्थिति (ग्रेड) आवंटित की जाए– प्रथम को B ग्रेड तथा द्वितीय को C ग्रेड दिया जाता है तो गुणात्मक अन्तर प्रकट होता है कि प्रथम मध्य स्तर का है और द्वितीय मध्यम स्तर का है।

ग्रेडिंग प्रणाली के निम्नलिखित लाभ होते हैं–

1. परम्परागत अंकन प्रणाली पर एक सुधार के रूप में नया विकास है। मानवीय योग्यताओं का मापन शुद्ध रूप में किया जाता है।
2. अनुस्थिति प्रणाली से गुणात्मक मापन होता है और अन्तर को सार्थक रूप में प्रकट किया जाता है।
3. इस प्रणाली ने 0 से 100 के पैमाने की अवधारणा को गलत सिद्ध कर दिया है। इसमें कम विस्तार के पैमाने पर मापन तथा मूल्यांकन किया जाता है।

क्या आप जानते हैं प्राचीन काल की शिक्षा में शारीरिक विकास को अधिक महत्व दिया जाता था, अत: परीक्षाएँ भी शारीरिक गुणों का ही मापन करती थीं। जैसे-जैसे शिक्षा-शास्त्रियों का ध्यान शारीरिक से मानसिक विकास की ओर अधिक केन्द्रित हुआ, वैसे-वैसे उनके समक्ष मानसिक गुणों की वृद्धि के मापन की समस्या भी आई।

2.4 मूल्यांकन का अर्थ (Meaning of Evaluation)

मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अधिगम-परिस्थितियों तथा सीखने के अनुभवों के लिये प्रयुक्त की जाने वाली सभी विधियों एवं प्रविधियों की उपादेयता की जांच की जाती है। मूल्यांकन शब्द शिक्षा तथा मनोविज्ञान में विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। तथा इसको कई प्रकार से परिभाषित भी किया गया है। ***'क्वालेन तथा हन्ना'*** की परिभाषा अधिक सार्थक प्रतीत होती है। उनके अनुसार- ''विद्यालय में हुए छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में प्रदत्तों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।''

"Evaluation is the process of gathering and interpreting evidence on changes in the behaviour of all students as they progress through school."

2.5 मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Evaluation)

मूल्यांकन की अधोलिखित आवश्यकता है-

1. मूल्यांकन द्वारा यह मालूम किया जाता है कि उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है।
2. मूल्यांकन प्रक्रिया से यह भी निश्चित किया जाता है कि किन विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी है ताकि समुचित उपचारात्मक अनुदेशन (Remedial Instruction) दिया जा सके।
3. कक्षा में छात्रों के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुसार स्तरीकरण (Ranking) किया जा सकता है।
4. शिक्षण की विधियों तथा प्रविधियों की उपादेयता और उनकी कमजोरियों को भी ज्ञात किया जाता है।
5. शिक्षण-आव्यूह (Teaching strategy) में सुधार तथा विकास किया जाता है तथा अनावश्यक अधिगम-स्रोतों को हटायाा भी जा सकता है।
6. मूल्यांकन-प्रक्रिया शिक्षक तथा छात्र दोनों के लिये पुनर्बलन का कार्य करती है।

इस प्रक्रिया में मानदण्ड-परीक्षा का महत्वपूर्ण कार्य होता है जिससे छात्रों में व्यवहार-परिवर्तन की जाँच होती है, जिसके आधार पर शिक्षक को अपनी क्रियाओं के सुधार तथा विकास के लिये दिशा मिलती है।

2.6 मूल्यांकन का क्षेत्र (Scope of Evaluation)

मूल्यांकन एवं औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की प्रक्रिया है। यह आधुनिक प्रत्यय मानते हैं। मूल्यांकन एक निरन्तर होने वाली प्रक्रिया है, जो स्वत: चलती रहती है। इसमें ज्ञानात्मक, भावनात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक तीनों पक्षों का मूल्यांकन होता है। मूल्यांकन एक गुणात्मक प्रक्रिया है। इसमें इनके अतिरिक्त निरीक्षण, अनुस्थिति मापनी, साक्षात्कार आदि अन्य प्रविधियों का भी प्रयोग होता है। इसके द्वारा बालक का विकास एवं शिक्षण-अधिगम की प्रभावशीलता का बोध होता है। इसके अन्तर्गत उद्देश्यों की प्राप्ति पर विशेष महत्व दिया जाता है। इसकी प्रक्रिया शिक्षण के अधिगम स्वरूप को विकसित करती है और शिक्षा की व्यवस्था का भी मूल्यांकन किया जाता है और उसके आधार पर सुधार करते हैं।

2.7 मापन तथा मूल्यांकन में अंतर (Difference between Measurement and Evaluation)

मापन का क्षेत्र बहुत सीमित रहता है जबकि मूल्यांकन की सीमा बहुत विस्तृत होती है। व्यक्ति के गुण-विशेष, जैसे किसी के अंग्रेजी में बोलने की कुशलता या किसी के इतिहास के ज्ञान को जानना, मापन कहलाता है। मूल्यांकन में व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक इत्यादि सभी गुणों की परीक्षा सम्मिलित रहती है। मापन में मूल्यांकन की अपेक्षा समय भी कम लगता है, क्योंकि यह एक ही परीक्षा होती है और मूल्यांकन कई परीक्षाओं का सम्मिलित रूप है। अत: इसमें अधिक समय लगता है।

मापन (Measurement)	**मूल्यांकन** (Evaluation)
1. मापन में अंक प्रदान किये जाते हैं। मापना ही मापन है। परीक्षक छात्रों की कापियों को देखकर अंकों के रूप में प्रस्तुत करते हैं।	1. अंक प्रदान करने के बाद जब हम अंकों का मूल्य निर्धारित करते हैं तो वह मूल्यांकन कहलाता है। जैसे 60 अंक प्राप्त करने वाला छात्र प्रथम है। यहाँ हम अंकों के साथ उनका मूल्य भी निर्धारित कर देते हैं जिसे मूल्यांकन कहा जाता है।
2. मापन का क्षेत्र सीमित होता है, इसके अन्तर्गत हम कुछ ही परीक्षाएँ लेते हैं, जिसका उद्देश्य केवल वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति करना है- जैसे गणित की परीक्षा तथा व्यावसायिक रुचि की परीक्षा इत्यादि।	2. मूल्यांकन में सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परीक्षा ली जाती है, किसी का मूल्यांकन करने के लिये हमें उसकी शारीरिक, मानसिक सामाजिक, संवेगात्मक तथा अन्य पक्षों की परीक्षा लेनी पड़ेगी, तभी उसका मूल्यांकन किया जा सकता है। अत: मूल्यांकन में कई परीक्षाओं का समावेश होता है।
3. मापन के आधार पर निश्चित धारणा नहीं बनाई जा सकती है, जैसा कि ऊपर कहा गया है कि मापन में कुछ ही परीक्षाएँ होती हैं और अधिकांश परीक्षाएँ इनमें शामिल नहीं रहतीं, इसलिये इसके आधार पर निश्चित धारणा बनाने में कठिनाई रहती है। जैसे, यदि कोई विद्यार्थी अंग्रेजी में सबसे अधिक अंक प्राप्त करता है तो हम यह नहीं कह सकते कि वह कक्षा का सबसे अच्छा छात्र है।	3. मूल्यांकन के आधार पर हम निश्चित धारणा बनाने में सफल रहते हैं। मूल्यांकन में सभी परीक्षाएँ सम्मिलित रहती हैं और इसके आधार पर हम किसी भी छात्र के बारे में निश्चित धारणा बना सकते हैं, उदाहरण के तौर पर यहाँ पर सभी परीक्षाओं के अंक उपलब्ध रहते हैं और इनका योग करके जो छात्र सभी विषयों के योग के आधार पर अधिक अंक प्राप्त करता है वह सबसे योग्य है और उसकी योग्यता सार्थक मानी जाती है, क्योंकि सभी पक्षों में परीक्षा देने के बाद उसका क्रम पहला आता है।
4. मापन में समय, धन तथा श्रम की कम आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें परीक्षाएँ कम होती हैं।	4. मूल्यांकन में श्रम, धन तथा समय की अधिक आवश्यकता होती है, क्योंकि इसमें कई परीक्षाओं का निर्माण, प्रशासन तथा विश्लेषण सम्मिलित रहता है।
5. मापन के आधार पर भविष्यवाणी (Prediction) सार्थकता के साथ नहीं की जा सकती।	5. मूल्यांकन में भविष्यवाणी सार्थकता के साथ कर सकते हैं, क्योंकि इसमें उसके सभी पहलुओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाता है।

2.8 मापन तथा मूल्यांकन में समानताएँ (Similarities Between Measurement and Evaluation)

मापन और मूल्यांकन के द्वारा शिक्षा क्षेत्र में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं। मापन और मूल्यांकन के द्वारा अध्यापकों तथा अभिभावकों को छात्र को समझने में बहुत सहायता मिलती है। इस सहायता का पता हमें तभी लग सकता है, जबकि हमें इसके उद्देश्यों का ज्ञान हो। ये ही प्रकारान्तर से विशेषताएँ भी हैं।

1. उन्नति देने में सहायक (Promotion)

मापन और मूल्यांकन में हम व्यक्ति के सभी क्षेत्रों की उन्नति की परीक्षा कर लेते हैं; अत: निश्चित है कि हमें इसके बारे में अधिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है और उसकी क्षेत्रों में हुई उन्नति के आधार पर हम उसे एक कक्षा में आसानी से उन्नति दे सकते हैं।

2. पाठ्यक्रम में संशोधन (Modification of Curriculum)

मूल्यांकन और मापन के आधार पर हम यह भी जान सकते हैं कि पाठ्यक्रम के कौन-कौन से अंश विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुकूल हैं और कौन से अंश उनकी आवश्यकता के प्रतिकूल हैं। ऐसा जानकर हम उनके पाठ्यक्रम में कुछ नयी बातें जो उनकी योग्यता के अनुकूल होती हैं, जोड़ देते हैं। जो पाठ ठीक नहीं होते, उन्हें पाठ्यक्रम से निकाल देते हैं। शिक्षा समाज का एक अंग है। समाज में समय-समय पर परिवर्तन होते हैं; अत: आवश्यक है कि सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ शिक्षा में भी उचित संशोधन व परिवर्द्धन हो। यह संशोधन हम मापन और मूल्यांकन की सहायता से सुविधापूर्वक कर सकते हैं।

3. छात्रों का वर्गीकरण (Classification of Students)

परीक्षा लेने के पश्चात् विद्यार्थियों की योग्यता के बारे में हमें पूर्ण जानकारी हो जाती है। शिक्षा व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर ही देनी चाहिये अर्थात् जिसमें जितनी योग्यता हो, उसके अनुसार ही उसे कार्य मिलना चाहिये। कक्षा में विभिन्न योग्यता के विद्यार्थी होते हैं। उस समय अध्यापक के लिये यह सम्भव नहीं होता कि वह अलग-अलग विद्यार्थियों पर अलग ध्यान दे सके। उनका वर्गीकरण करके व्यक्तिगत ध्यान दिया जा सकता है। योग्यता के आधार पर विद्यार्थियों को दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता है।

(अ) क्षैतिज वर्गीकरण (Horizontal Classification)- इस प्रकार के वर्गीकरण में समान योग्यता वाले विद्यार्थी एक ही कक्षा में रखे जाते हैं।

जैसे 'अ' कक्षा में 50 विद्यार्थी हैं जिनके अंक 30 आये हैं। इसी प्रकार 'ब' और 'स' में भी क्रमश: वे सभी विद्यार्थी हैं जिनके अंक 20, और 10 आये हैं, अत: इस प्रकार के वर्गीकरण में लगभग एक ही योग्यता के विद्यार्थी एक कक्षा में रखे जाते हैं। इससे अध्यापक को यह सुविधा रहती है कि उसे व्यक्तिगत भिन्नता का ध्यान नहीं रखना पड़ता, क्योंकि पूरे वर्ग में एक ही योग्यता के विद्यार्थी रहते हैं।

(ब) उदग्र वर्गीकरण (Vertical Classification)- इस प्रकार के वर्गीकरण में विभिन्न योग्यता वाले विद्यार्थी एक ही वर्ग में रखे जाते हैं।

एक वर्ग में 10 विद्यार्थी वे हैं जिनके 40 अंक हैं, 20 विद्यार्थी ऐसे हैं जिनके अंक 20 हैं तथा 10 विद्यार्थी ऐसे हैं जिनके अंक 10 हैं अर्थात् ये सब भिन्न-भिन्न योग्यता वाले हैं। इस प्रकार के वर्गीकरण को उदग्र वर्गीकरण कहते हैं। इस वर्गीकरण को चित्र नम्बर 2 में दिखाया गया है। प्राय: विद्यालयों में इसी प्रकार का वर्गीकरण रहता है।

4. भविष्यकथन (Prediction): मापन और मूल्यांकन से हमें विद्यार्थी की वर्तमान अवस्था के बारे में पूर्ण जानकारी हो जाती है। इस जानकारी के आधार पर हम उसके बारे में भविष्यवाणी कर सकते हैं कि वह इस विषय में आगे चलकर कैसा रहेगा। यदि एक विद्यार्थी 11 वर्ष की आयु में अंग्रेजी की परीक्षा में बहुत अच्छे अंक प्राप्त

करता है, तो हम कह सकते हैं कि अन्य बातें समान होने पर वही विद्यार्थी आगे चलकर अंग्रेजी में अच्छा स्थान प्राप्त कर सकेगा।

5. निदान (Diagnosis)

प्राय: यह देखा जाता है कि विद्यार्थियों की योग्यता सभी विषयों में समान नहीं होती। इसका एक कारण तो व्यक्तिगत भिन्नता है और दूसरे भी बहुत से कारण हो सकते हैं, जिनका पता हमें निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic test) से लग सकता है। इससे विद्यार्थी की विषयानुसार कठिनाई का पता लगाने में सहायता मिलती है। इसके अन्तर्गत हम क्रमिक कठिनाई की परीक्षा प्रत्येक विषय में बनाते हैं और फिर उसी निश्चित क्रम में विद्यार्थी की परीक्षा लेते हैं। जहाँ पर विद्यार्थी सही रूप से उत्तर देने में असफल होता है, वहीं कठिनाई होती है। कठिनाई का पता लगने के बाद उसका कारण जानने की कोशिश की जाती है फिर उसका उपचार किया जाता है। इस प्रकार की परीक्षाओं से अध्यापक और छात्र दोनों को ही लाभ होता है।

6. वैधता (Validity)

मापन और मूल्यांकन की प्रणालियाँ अधिकतर वैध होती हैं। यदि हमारी परीक्षा हमारे उद्देश्य को मापने में सफल रहती हैं तो उसे हम वैध परीक्षा कहते हैं। जैसे यदि हमें विद्यार्थियों की लम्बाई नापनी है तो हम मीटर के निशान वाले माप-दण्ड से आसानी से माप सकते हैं, क्योंकि ऐसा मापदण्ड लम्बाई को नापने का वैध उपकरण (Instrument) है। इसी प्रकार यदि हमें विद्यार्थियों के ऐतिहासिक ज्ञान को मापना है और हमारी परीक्षा उसे मापने में सफल होती है तो वह इतिहास की वैध परीक्षा कहलायेगी।

कहने का तात्पर्य यह है कि मापन और मूल्यांकन में जितनी परीक्षाओं की हम सहायता लेते हैं, वे अधिकतर वैध होती हैं।

7. विश्वसनीयता (Reliability)

परीक्षा विश्वसनीय होनी चाहिये। इस पर विश्वास करने का अर्थ यह होता है कि यदि विद्यार्थियों की कापियों को वही अध्यापक कुछ समय के बाद फिर जाँचे तो उसे सभी विद्यार्थियों को उतने ही अंक देने चाहिए जितने कि उसने पहले दिये थे। इसके साथ-साथ यदि भिन्न-भिन्न परीक्षक भी किसी एक कापी को जाँचें तो सभी को समान अंक देने चाहिये। यदि परीक्षा में यह गुण होता है तो परीक्षा विश्वसनीय कही जाती है। प्रचलित परीक्षा में विश्वसनीयता का अभाव है।

8. वस्तुनिष्ठता (Objectivity)

परीक्षा वैषयिक होनी चाहिये अर्थात् प्रत्येक प्रश्न और उसका उत्तर पहले से ही निर्धारित कर लेना चाहिये। यदि विद्यार्थी पूर्व निर्धारित कुंजी के अनुसार उत्तर नहीं देता तो उसके अंक नहीं दिये जाते हैं। इससे यह सम्भव है कि यदि विद्यार्थी की दूसरी बार भी परीक्षा ली जाये तो उसके अंक लगभग उतने ही आयेंगे जितने पहले थे। इस तरह वैषयिकता का विश्वसनीयता से निकटतम सम्बन्ध है।

शिक्षक जब उद्देश्यों के लिये अधिगम परिस्थितियों का सावधानी से निर्धारण कर लेता है तब मूल्यांकन के लिये, परीक्षा का निर्माण किया जाता है। इस परीक्षा से यह निश्चय किया जाता है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है। *मेगर* का कथन है कि इस सोपान में शिक्षक नियोजन, शिक्षण-विधियों, प्रविधियों, (Strategies and Tactics) अनुदेशन तथा अन्य शिक्षण सहायक सामग्री की उपयोगिता का मूल्यांकन करता है, जिससे उनमें सुधार तथा विकास के लिए शिक्षक को प्रोत्साहन मिलता है। उसके आधार पर शिक्षक उत्तम साधनों तथा स्रोतों का प्रयोग अधिगम के लिये करता है जिससे उसके शिक्षण कौशल का विकास होता है। इसके लिये शिक्षक मानदण्ड-परीक्षा (Criterion test) की रचना करता है।

निष्पत्ति-परीक्षा तथा मानदण्ड-परीक्षा में अक्सर भ्रम हो जाता है। इन दोनों में अन्तर होता है। मानदण्ड परीक्षा उद्देश्यों के मूल्यांकन पर बल देती है जबकि निष्पत्ति परीक्षा पाठ्यवस्तु के मापन को महत्व देती है।

प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन की प्रक्रिया निरपेक्ष तथा अप्रत्यक्ष होती है। निरपेक्ष का अर्थ होता है कि भौतिक मापन की भाँति शून्य का मान निरपेक्ष नहीं होता है अपितु शून्य का मान सापेक्ष होता है। जैसे किसी विषय के परीक्षण में एक छात्र के अंक शून्य प्राप्त हुए इसका अर्थ यह नहीं है कि उस विषय में उसे कुछ भी ज्ञान नहीं है अपितु परीक्षण में सम्मिलित प्रश्नों का ज्ञान नहीं है। व्यावहारिक विज्ञानों में शून्य सन्दर्भ बिन्दु नहीं होता है अपितु समूह का निष्पादन सन्दर्भ बिन्दु माना जाता है। क्योंकि मापन की प्रक्रिया सापेक्ष होती है।

शिक्षा में मापन की सापेक्षता का अर्थ एक उदाहरण स्पष्ट किया जा सकता है। एक छात्र के गणित में 60 अंक और अंग्रेजी में 29 अंक प्राप्त किया। दोनों विषयों के पूर्णांक 100 है। इसका अर्थ हुआ 60 प्रतिशत गणित में 29 प्रतिशत अंग्रेजी में अंक प्राप्त किये गणित में प्रथम श्रेणी के अंक तथा अंग्रेजी में पास भी नहीं है। परन्तु जब कक्षा शिक्षक से जानकारी की गई तब शिक्षक ने बताया कि अंग्रेजी में सबसे अधिक प्राप्त किए और गणित में सबसे कम अंक प्राप्त किये हैं। यह अर्थापन समूह के निष्पादन के सन्दर्भ में किया गया है जो अधिक सार्थक है। यहाँ सापेक्ष से तात्पर्य समूह के सन्दर्भ में छात्र में छात्र का निष्पादन किस स्तर का है। इस इकाई में हम मापन की अनुमापनियों का अध्ययन करेंगे।

3.1 अप्रत्यक्ष मापन (Indirect Measurement)

भौतिक विज्ञान में मापन प्रत्यक्ष होता है और शिक्षा तथा मनोविज्ञान में सामान्यत: अप्रत्यक्ष होता है। भौतिक विज्ञान में जिस पक्ष का मापन करना होता है उस पर मापनी रख कर माप लेते हैं। किसी की लम्बाई, ऊँचाई ज्ञात करने के लिये पैमाना रखकर माप लेते हैं जबकि शिक्षा तथा मनोविज्ञान में जिस गुण, चर का मापन करना हो उस पर प्रत्यक्ष मापनी नहीं रख सकते क्योंकि वह चर अमूर्त होता है। उसकी संरचना का बोध व्यवहारों से होता है इसलिये अमूर्त चरों का मापन व्यवहारों की सहायता से अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता है। उदाहरण के लिए बुद्धि एक ऐसी अनुभूति है जो व्यवहारों से प्रतीत होती है परन्तु इसका प्रत्यक्षीकरण सम्भव नहीं है। इसलिये व्यवहारों से अप्रत्यक्ष रूप में बुद्धि का मापन किया जाता है। व्यवहारों से सम्बन्धित प्रश्न मौखिक तथा लिखित रूप में पूछे जाते हैं। सही उत्तर को एक अंक तथा गलत को शून्य अंक दिया जाता है।

उदाहरण के लिये-

प्रश्न- आकाश : नीला : : दूध : (सफेद)

इस प्रश्न के सही उत्तर के लिये आकाश तथा नीले में सम्बन्ध रंग का ज्ञात करने पर ही सही उत्तर (सफेद) दे सकता है। इसमें तार्किक योग्यता की आवश्यकता है। तार्किक योग्यता बुद्धि का महत्वपूर्ण कारक है।

यह प्रश्न बुद्धि के तार्किक कारक का ही मापन नहीं करता अपितु हिन्दी की शब्दावली का भी साथ-साथ मापन करता है दूध के रंग का शब्द ज्ञान है तभी सही उत्तर दे सकता है। इस प्रकार यह प्रश्न बुद्धि तथा हिन्दी योग्यता का मापन करता है।

अप्रत्यक्ष मापन की समस्या यह है कोई भी व्यवहार ऐसा नहीं है जो केवल एक ही चर। प्रत्यक्ष का मापन करता हो, अपितु एक से अधिक का मापन करता है। मानवीय व्यवहारों की संख्या सीमित है परन्तु उसके चर अनेक हैं। इसलिये शुद्ध मापन सम्भव नहीं होता है। क्योंकि इनका मापन व्यवहारों के आधार पर अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता है।

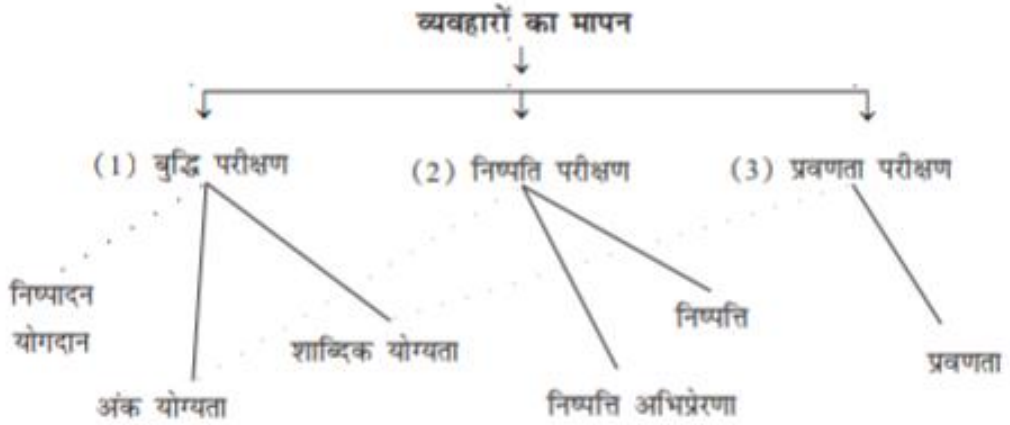

3.2 प्रत्यय एवं संरचना (Concept and Construct)

सामान्यत: प्रत्यय एवं संरचना का एक ही अर्थ होता है। किसी अमूर्त के सामान्यीकरण की अभिव्यक्ति को प्रत्यय कहते हैं। जैसे बुद्धि, निष्पत्ति, व्यक्तित्व ऊर्जा, अभिप्रेरण, आवश्यकता आदि। विशिष्ट व्यवहारों के अवलोकन से अमूर्त का स्वरूप भी निर्धारित करते हैं। उसे संरचना कहते हैं।

यदि कोई बालक अपने आयु बालकों से उच्च स्तर का व्यवहार करता है तब कहते हैं कि बालक बुद्धिमान है और अंकगणित की अपेक्षा भाषा की अभिव्यक्ति उच्च स्तर की है यह बुद्धि की 'संरचना' को प्रकट करता है। इसलिए प्रत्यय एवं संरचना का अर्थ एवं आधार समान है। बुद्धि एक प्रत्यय भी है तथा उसकी संरचना भी जिन व्यवहारों से अमूर्त के सम्बन्ध में सामान्यीकरण किया है। इस प्रकार संरचना भी एक प्रत्यय है।

3.3 चर का अर्थ (Meaning of Variable)

किसी वस्तु या व्यक्ति की विशषता को चर की संज्ञा दी जाती है। विशेषताओं के आधार पर भिन्नता का निर्धारण होता है। चर एक संकेत मात्र होता है जिसमें अंकों अथवा मूल्यों का आवंटन होता है। चर कोई भी न्याय संगत मूल्य ले सकता है। इस प्रकार संकेत कोई संख्यात्मक मान या मूल्य दिया जाता है। बुद्धि परीक्षण द्वारा विशिष्ट अंक प्रदान किये जाते हैं।

नोट्स बुद्धि मापन के मूल्य को बुद्धि-लब्धि (I.Q.) कहा जाता है।

चर की प्रकार (Types of Variable)-किसी व्यक्ति या वस्तु का मापन नहीं किया जा सकता है। अपितु उसके गुणों अथवा विशेषताओं (चरों) का मापन किया जाता है। उसके आधार पर व्यक्तिगत भिन्नता ज्ञात की जाती है। चरों का विभाजन कई प्रकार से किया जाता है। चरों के प्रकार का वर्गीकरण यहाँ चार्ट द्वारा प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार चरों का विभाजन तीन प्रकार से किया जाता है-

(1) सम्पादन के आधार पर

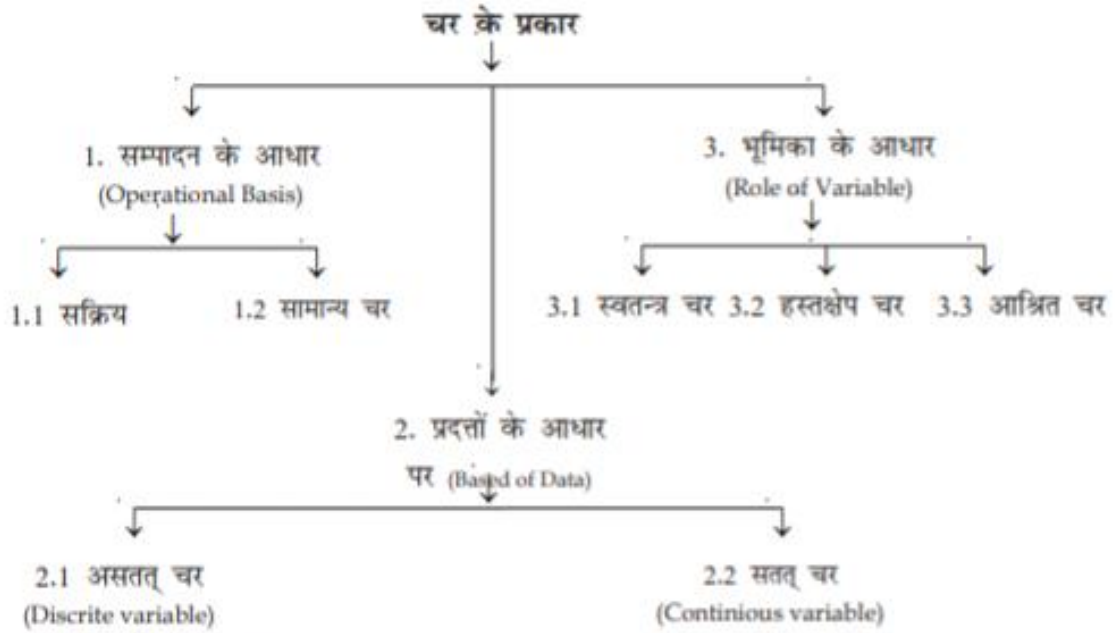

(2) प्रदत्तों के आधार पर

(3) चरों की भूमिका के आधार पर।

(1) सम्पादन के आधार पर (Operational Variable)-इस प्रकार के चरों का उपयोग प्रयोगात्मक कार्यों में किया जाता है जिस चर का प्रभाव देखा जाता है और उस चर का सम्पादन करते हैं तब उसे सक्रिय चर (Active Variable) कहते हैं। किसी चर का सामान्य विशेषता के लिए मापन किया जाता है तब उसे विशेषता चर (Attribute variable) कहते हैं।

(2) प्रदत्तों की प्रकृति के आधार पर (Based on Nature of Data)-चरों की प्रकृति में भिन्नता अधिक होती है इसलिए उनके मापन हेतु विविध प्रकार के परीक्षण प्रविधियां का उपयोग किया जाता है और उनसे प्रदत्त भी भिन्न प्रकार के प्राप्त होते हैं। प्रदत्तों की प्रकृति के आधार पर चरों का विभाजन दो वर्गों में किया जा सकता है-

(अ) असतत् चर (Discrete Variable) तथा

(ब) सतत् चर (Continuous Variable)

प्रदत्तों के आधार पर चरों के वर्गीकरण का विवरण यहाँ पर दिया गया है-

(अ) असतत् चर (Discrete Variable): इस प्रकार के चरों के मापन को नामित मापन (Nominal Measurement) भी कहते हैं। इसे वर्गीकृत चर भी कहा जाता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में कुछ इस प्रकार के चर होते हैं जिनका मापन पृथक् वर्गो में किया जाता है। मापन आवृत्तियों रूप में होता है। जैसे कि कक्षा में छात्र व छात्राओं की संख्या, जनगणना में पुरुष तथा महिलाओं की संख्या आदि।

वास्तव में इस प्रकार चरों का वर्गीकरण किया जाता है। इस प्रकार के चरों का मापन सबसे निम्न स्तर का होता है इसमें निरीक्षण प्रविधि के आधार पर आवृत्तियों को अंकित कर लिया जाता है।

इस प्रकार के चरों के मापन के अर्थापन के लिए बहुलांक केन्द्रवर्ती मान तथा कई वर्ग परीक्षण का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार चरों के सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए फाई तथा कंटिजेन्सी सह-सम्बन्ध की गणना की जाती है।

(ब) सतत् चर (Continuous Variable): शिक्षा तथा मनोविज्ञान में सतत् चरों का उपयोग अधिक किया जाता है। इस प्रकार के चरों का मापन में संकेतों को इस प्रकार अंक दिये जाते हैं जिनमें एक क्रम होता है, और उनकी निश्चित सीमा भी होती है। सतत् चरों के मूल्यों से एक क्रम का बोध होता है। यह मूल्यों का क्रम अनुमापनी द्वारा ज्ञान किया जाता है। प्रत्येक सदस्य को अंक दिये जाते हैं जिससे व्यक्तिगत भिन्नता का बोध होता है। सतत् चरों के मापन के लिए परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। जैसे बुद्धि परीक्षण, निष्पत्ति परीक्षण, प्रवणता परीक्षण आदि। सतत् चरों के मापन में ऐसे प्रश्न दिये जाते हैं जिनका अंकन सही अथवा गलत को शून्य अंक दिया जाता है। अंकन में निरन्तरता नहीं होती है। एक तथा शून्य के मध्य कोई अंक नहीं दिया जाता है। जैसे छात्र का प्राप्तांक 60 है इसका अर्थ होता है (59.5 से 60.5) विस्तार में शुद्ध अंक है। इसी प्रकार सांख्यिकी में प्रदत्तों को वर्गान्तर तालिका में व्यवस्थित किया जाता है।

वर्गान्तर	वर्गान्तर सीमांक
60-69	59.5-69.5
50-59	49.5-59.5
40-49	39.5-48.5
30-39	29.5-39.5

इसी प्रकार से प्राप्तांको के शुद्ध मान ज्ञात करने के लिए सांख्यिकी का उपयोग किया जाता है।

सतत् चरों में सांख्यिकी का उपयोग-इस प्रकार के चरों के मापन से जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनमें सभी प्रकार की सांख्यिकी प्रविधियों का उपयोग किया जाता है। साधारणत: मध्यमान तथा प्रमाणिक विचलन का उपयोग किया जाता है। सह-सम्बन्ध ज्ञान करने के लिए पीयर्सन विधि का उपयोग करते हैं। दो समूहों के अन्तर के लिए 'टी' परीक्षण का उपयोग किया जाता है। दो से अधिक समूहों की तुलना में चारिता विश्लेषण का उपयोग करते हैं।

सतत् चरों के मापन हेतु परीक्षणों का प्रमापीकरण करने के लिए मानको को विकसित कर लिया जाता है। इन चरों के मापन का अर्थापन करने के लिए परासांख्यिकी का उपयोग किया जाता है। इनका मापन अधिक शुद्ध स्तर पर किया जाता है जिससे अर्थापन भी अधिक शुद्ध होता है।

(3) चरों की भूमिका के आधार पर (Roles of Variable)-शिक्षा तथा मनोविज्ञान के अध्ययनों में चरों की भूमिकाओं का विशेष महत्व होता है। परिस्थिति के अनुसार चरों की भूमिकाएँ बदलती रहती हैं। भूमिकाओं के आधार पर चरों को तीन प्रकार का माना गया है- 1. स्वतन्त्र चर 2. आश्रित चर तथा 3. हस्तक्षेप चर। इनका

1. स्वतन्त्र चर (Independent Variable)-प्रयोगात्मक अध्ययनों में तथा सह-सम्बन्ध ज्ञात करते समय स्वतन्त्र चर की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। प्रयोगात्मक कार्य में जिस चर का प्रभाव देखने के लिए सम्पादन किया जाता है। वह स्वतन्त्र चर होता है। स्वतन्त्र चर की भूमिका अवधारणा पर निर्भर होती है। जैसे बुद्धि और निष्पति आश्रित चर है।

क्या आप जानते हैं असतत् चर को पामित भी कहते हैं। इस प्रकार के चरों को आवृत्तियों में मापन किया जाता है जैसे लिंग चर, राष्ट्रीयता, साक्षरता पास तथा फेल, परीक्षा में सफलता आदि का मापन आवृत्तियों में किया जाता है।

3.4 मापन की अनुमापनियाँ (Sclaes of Measurement)

मापन का नियमों तथा धारणाओं के आधार पर वर्गीकरण किया जा सकता है। यही नियम तथा धारणायें मापन-प्रक्रिया को आधार प्रदान करती हैं। स्वीवेन्स ने 1946 में मापन को निम्न चार स्तरों में विभाजित किया है-

(1) नाम-सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)
(2) क्रम-सूचक मापनी (Ordinal Scale)
(3) समान आवान्तर मापनी, तथा (Equal Interval Scale) तथा
(4) अनुपात मापनी (Ratio Scale)

(1) नाम-सम्बन्धी मापनी (Nominal Scale)-मापन के चारों स्तरों में यह सबसे कम शुद्ध स्तर माना जाता है इसमें केवल दो या दो से अधिक वर्गों में किसी तथ्य का विभाजन किया जाता है। उसके परिणाम का बोध नहीं होता है। उदाहरण के लिये छात्राध्यापकों का हम कई तथ्यों के आधार पर विभाजन करते हैं जैसे, लिंग (Sex) के आधार पर, शिक्षण विषयों के आधार पर इत्यादि। इस स्तर के मापन के लिये प्रश्नावली (Questionnaire) तथा निरीक्षण-प्रविधि (Observation Technique) प्रयुक्त की जाती है। इस स्तर पर प्रदत्त केवल आवृत्ति (Frequency) में प्राप्त होते हैं जिनके विश्लेषण के लिये बहुलांक (Mode), प्रतिशत काई-वर्ग (Chi-Square) तथा सह सम्बन्ध (Contingency) प्रविधियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं।

(2) क्रम-सूचक मापनी (Ordinal Scale)-यह मापन का स्तर पहले की अपेक्षा शुद्ध होता है। प्रत्येक वर्ग के छात्रों को एक क्रम (Rank) में व्यवस्थित किया जाता है। इसमें छात्रों को अनुपस्थिति (Rank) दिया जाता है। इस स्तर के मापन में निरीक्षण के आधार पर तर्कपूर्ण ढंग से एक क्रम में अनुपस्थिति (Rank) प्रदान किया जाता है। उनको आपस की दूरी का बोध नहीं होता है। उदाहरण के लिये छात्राध्यापकों को लड़कों तथा लड़कियों के समूहों में विभाजित करके शिक्षक यदि उनको अनुपस्थितियाँ (Rank) प्रदान करता है तब यह मापन क्रम-सूचक स्तर (Ordinal Scale) माना जायेगा। इस स्तर के मापन के लिये निरीक्षण-प्रविधि तथा स्तर-सूची (Rating Scale) को प्रयुक्त किया जाता है। इसमें आवृत्ति को एक क्रम में रखा जाता है। मध्यांक (Median) स्पीयरमेन रेंक विधि का प्रयोग सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के लिये, काई-वर्ग (Chi-Square) परीक्षा को अन्तरों का विश्लेषण करने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षक अपनी शिक्षण क्रियाओं के समय छात्रों का व्यवहार के आधार पर स्तरीकरण करता है और कक्षा अधिगम क्रियाओं के मूल्यांकन में प्रयुक्त करता है।

(3) समान आवान्तर मापनी (Equal Interval Scale)-इस मापन स्तर की वही सब विशेषतायें होती हैं जो प्रथम दो स्तरों की होती हैं परन्तु इसकी विशेषता यह भी है कि यह दो व्यक्तियों के मध्य की दूरी प्रकट करता

है। इस स्तर में शून्य माना हुआ होता है क्योंकि शैक्षिक मापन अपेक्षाकृत होता है। चर (Variable) के मापन के लिये अंक प्रदान किये जाते हैं। छात्रों को परीक्षा में अंक दिये जाते हैं। विभिन्न विषयों के अंक अलग-अलग होते हैं। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन का सबसे शुद्ध स्तर माना जाता अलग-अलग होते हैं। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में मापन का सबसे शुद्ध स्तर माना जाता है। निम्नलिखित उदाहरण से इसकी शुद्धता का बोध हो सकता है-

छात्र (Student)	*क्रम सूचक मापनी (Ordinal Scale)*	*समान आवान्तर स्तर (Equal-Interval Scale)*
अ	1	50
ब	2	98
स	3	99

अ, ब में स्तर का अन्तर एक का है और अंको में 48 का अन्तर है, जबकि **स** में रेंक का अन्तर एक का है और अंकों में भी एक का ही अन्तर है। यह मापन शुद्ध सूचना प्रस्तुत करता है। इसके लिये निष्पत्ति परीक्षा का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के प्रदत्तों के विश्लेषण में मध्यमान, प्रमाणित विचलन, सह-सम्बन्ध गुणक विधि, टी-परीक्षण, आदि अधिक शुद्ध सांख्यिकी-प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। शिक्षक को इसी स्तर के मापन को अधिक प्रयुक्त करना होता है। मापन के इस स्तर के लिये शिक्षक मानदण्ड-परीक्षा को प्रयुक्त करता है और प्राप्त अंकों के आधार पर उद्देश्यों के सम्बन्ध में निर्णय लेता है।

मापन की अनुमापनियों का तुलनात्मक विवरण
(Comparison of Scales of Measurement)

अनुमापनी	*विशेषता*	*प्रविधियाँ*	*सांख्यिकी का उपयोग*
1. नामित (Nominal)	वर्गों में आवृत्तिया सापेक्ष	निरीक्षण प्रश्नावली अप्रत्यक्ष मापन	आवृत्तियाँ बहुलांक, काई वर्ग परीक्षण एवं 'सी- सह-सम्बन्ध
2. अनुस्थित (Ordinal)	अनुस्थितियाँ क्रमानुसार सापेक्ष	रेंटिंग मापनी निरीक्षण मापन अनुस्थितियाँ	मध्यांक तथा निरीक्षण स्पीयरमैन रोह सह-सम्बन्ध काई वर्ग
3. वर्गान्तर समान (Equal Interval Scale)	सापेक्ष मापन अंक समान वर्गान्तर, सापेक्ष	परीक्षण निरीक्षण मापनियाँ	मध्यमान, प्रमाणिक विचलन, पीयर्सन सह-सम्बन्ध 'टी-' परीक्षण
4. अनुपातिक (Ratio Scale)	निरपेक्ष मापन शून्य सार्थक	भौतिक मापनियाँ प्रत्यक्ष मापन	गणित का उपयोग पीयर्सन

(4) अनुपात मापनी (Ratio Scale)-यह सबसे शुद्ध मापन का स्तर माना जाता है। इसमें इकाइयाँ समान होती है। शून्य का अस्तित्व होता है। भौतिक विज्ञान के चरों, जैसे तापक्रम, भार, आयतन आदि के मापन में इसी स्तर का प्रयोग होता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान के मापन में इसका प्रयोग कम होता है। इसमें सांख्यिकी की अपेक्षा प्रदत्तों के विश्लेषण में गणित का प्रयोग किया जाता है।

इन अनुमापनियों के आधार पर मापन के प्रकार भी किये जाते हैं। क्योंकि इन चारों प्रकार से मापन किया जाता है- 1. नामित मापन 2. अनुस्थिति मापन 3. समान-वर्गान्तर मापन तथा अनुपातिक मापन। इन्हें एक शुद्ध मापन चढ़ाव क्रम में प्रस्तुत किया गया है।

मापन का अर्थ होता है चरों (गणों) को संख्या/मात्रा में बदलना। संख्या में बदलने के लिए नियमों का उपयोग किया जाता है, और अवधारणाओं की सहायता ली जाती है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में नामित मापन सबसे निम्न स्तर का होता है, और समान-वर्गान्तर मापन सबसे शुद्ध मापन माना जाता है। अनुपातिक मापन का उपयोग भौतिक विज्ञान में होता है, क्योंकि यह निरपेक्ष होता है और शून्य का मान होता है। जबकि इसके अतिरिक्त मापनियों में सापेक्ष मापन होता है शून्य माना हुआ होता है।

मापन से जो प्राप्तांक आते हैं वे अर्थहीन होते हैं उनका कोई अर्थ नहीं होता है। उनका अर्थापन करने के लिए गणित एवं सांख्यिकी की प्रविधियों का उपयोग किया जाता है तब उन्हें सार्थक बनाया जाता है। मनोविज्ञान तथा शिक्षा के मापन के प्राप्तांको में सांख्यिकी का उपयोग किया जाता है। क्योंकि सांख्यिकी का सम्बन्ध समूह अथवा न्यादर्श से होता है। इसमें अर्थापन सापेक्ष होता है।

नामित मापन में समूह के सदस्यों को दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। छात्र और छात्राओं की पृथक्-पृथक् संख्या में गणना करना। अनुस्थिति में उन्हें क्रम में रखना अथवा अनुस्थितियाँ प्रदान करना। समान-वर्गान्तर में परीक्षण देकर उन्हें अंक प्रदान करना होता है। इस प्रकार मापन की शुद्धता बढ़ती जाती है यहाँ एक उदाहरण से स्पष्ट किया गया है-

छात्र	*अनुस्थिति मापन*	*अंकों का अन्तर*	*समान-वर्गान्तर मापन*	*अंकों का अन्तर*
अ	2		48	
ब	1	1	49	1
स	3	1	20	28

इस उदाहरण में ब को प्रथम, अ को द्वितीय तथा स को तृतीय अनुस्थिति प्रदान की गई है। इनका अनुस्थितियों में एक अन्तर है पर समान वर्गान्तर में ब तथा अ के अंकों का अन्तर 1 और अ और स के अंकों में अन्तर 28 का है। अनुस्थितियों के अन्तर से वास्तविक अन्तर का बोध नहीं होता है। समान-वर्गान्तर से अन्तर का बोध अंकों से होता है इसलिए समान-वर्गान्तर मापन को शुद्ध मानते हैं। नामित मापन में सभी को समान अंक दिया जाता है। जबकि सभी समान नहीं होते है। अनुस्थिति मापन में भिन्नता के आधार पर क्रम में रख लिया जाता है। अनुस्थितियों में अन्तर समान होता है। जबकि सभी के मध्य अन्तर समान नहीं होता है।

टास्क नाम संबंधी मापन के लिए किन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है?

3.5 मापन की मुख्य क्रियाएँ (Main Tasks of Measurement)

व्यक्ति के सभी गुणों का मापन तथा वर्णन करना सम्भव नहीं है इसलिए सम्बन्धित तथा सार्थक चरों का विवरण देना अधिक उपर्युक्त है। उनमें गुणात्मक पक्षो का वर्णन करना अधिक उपयोगी है। यहाँ अधिक शुद्ध रूप में परिणामात्मक प्रत्ययों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। यह ध्यान रखना चाहिए कि किसी व्यक्ति एवं वस्तु का मापन नहीं किया जा सकता है। अपितु उसकी विशेषताओं या चरों का मापन किया जाता है। मापन के प्रत्येक क्षेत्र में तीन सोपानों का अनुसरण किया जाता है। यह सोपान इस प्रकार है-

1. जिस गुण या चर का मापन करना है उसको पहचानना तथा उसकी व्यावहारिक परिभाषा (Operational Definition) करना।
2. उन व्यवहारों के समूह को निर्धारित करना जिससे मापन किये जाने वाले चर की अभिव्यक्ति होती है।
3. उस प्रक्रिया को परिभाषित करना अथवा स्थापित करना जिससे व्यवहारों को परिमाण में बदलना या अंक प्रदान करना या अनुस्थिति लगाना।

इन सोपानों को समझने के लिए मापन प्रक्रिया का समुचित ज्ञान करने होती है उनके लिए मापन सैद्धान्तिक पक्ष जाना आवश्यक है। इसके साथ मापन की समस्याओं का बोध भी होना चाहिए। इन सोपानों का विवरण निम्नांकित पंक्तियों में दिया गया है।

(1) चर को पहचानना और उसी परिभाषा करना (Identifying and defining a Variable): मापन प्रक्रिया में व्यक्ति का मापन नहीं होता है अपितु सदैव उसके गुणों अथवा चरों का मापन किया जाता है। अधिकांश

चरों का मापन व्यवहारों से होती है। क्योंकि यह चर अमूर्त होते, हैं। चर की संरचना का बोध व्यवहारों के विशिष्ट समूह से किया जाता है। इसलिए प्रथम क्रिया चर की पहचान करना। चर की परिभाषा सैद्धान्तिक न होकर व्यवहारिक होनी चाहिए। विशिष्ट व्यवहारों की अभिव्यक्ति के लिए समुचित उद्दीपन या परिस्थितियाँ दी जा सकती है। यह मापन की प्रक्रिया अप्रत्यक्ष होती है।

व्यावहारिक विज्ञानों के मापन की गम्भीर समस्या यह है कि अमूर्त चर की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती है। जैसे बुद्धि की परिभाषाएँ मापन की दृष्टि से अहम् होती है क्योंकि परिभाषा चर का व्यावहारिक स्वरूप निर्धारित करती है।

यदि बुद्धि मापन हेतु परीक्षण की रचना करना है तब कुछ प्रश्नों का समुचित ज्ञात करना होगा। बुद्धि का क्या अर्थ है? किस प्रकार के व्यवहारों से बुद्धि का बोध होता है? बौद्धिक व्यवहारों का स्वरूप कैसा है? बुद्धि के अमूर्त प्रत्यय की कैसी संरचना है। बुद्धि की परिभाषा इस प्रकार की जाय जिसे सामान्य रूप से अधिकांश व्यक्ति स्वीकार कर सके। वस्तु स्थिति यह है कि बुद्धि को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है जैसे-

1. अमूर्त चिन्तन की योग्यता को बुद्धि कहते है।
2. नवीन परिस्थितियों में समायोजन की क्षमता को बुद्धि कहते हैं।
3. सह-सम्बन्ध देखने की अन्तर्दृष्टि को बुद्धि कहते हैं।
4. किसी कार्य को कुशलता से सम्पादन करने की क्षमता को बुद्धि कहते हैं।

इस प्रकार बुद्धि प्रत्यय की अनेक परिभाषा दी गई है। प्रत्येक परिभाषा के अनुसार बुद्धि की संरचना भिन्न-भिन्न प्रकार की है तथा व्यवहारों का स्वरूप भी भिन्न-भिन्न प्रकार का है। इसलिए कोई भी एक परीक्षण का निर्माण नहीं किया जा सकता जो सभी को सम्मिलित कर सके। बुद्धि मापन के लिए- शाब्दिक बुद्धि परीक्षण, अशाब्दिक बुद्धि परीक्षण तथा सम्पादन बुद्धि परीक्षण का निर्माण किया गया है। गुण अथवा चर को पहचानने और परिभाषित करने के बाद उसकी संरचना का विवरण तैयार करना होता है और सम्बन्धित व्यवहारों का स्वरूप भी निर्धारित किया जाता है जो उपयोगी प्रतीत होते हैं।

किसी एक व्यक्ति के व्यवहारों के आधार पर विवरण तैयार करना उपयोगी नहीं होता है। जिस समूह या जनसंख्या के परीक्षण का निर्माण करना है। उस समूह के व्यवहारों के आधार पर विवरण तैयार किया जाता है।

इसी प्रकार निष्पति परीक्षण के लिए विषय की पाठ्यवस्तु के सभी तत्वों पर प्रश्नों की रचना की जाती है और मानदण्ड सन्दर्भित परीक्षण के अन्तर्गत शिक्षण के उद्देश्यों मापन के लिए प्रश्नों का निर्माण किया जाता है। निष्पत्ति की पहचान एवं परिभाषा सन्दर्भ के आधार पर की जाती है। मनुष्य के गुणों के मापन में मानवीय व्यवहारों को महत्व दिया जाता है। यह व्यवहार गुणों के मापन में सम्मिलित रहते हैं। एक व्यवहार एक से अधिक गुणों या चरों का मापन करता है। शिक्षा तथा मनोविज्ञान में कोई भी परीक्षण पूर्ण रूप से वैध तथा विश्वसनीय नहीं होता है। उसकी रचना में व्यक्तिगत त्रुटि का प्रभाव रहता है। मापन का अर्थापन भी शुद्ध नहीं होता है। परीक्षण पदों को सम्मिलित करने का ठोस आधार नहीं होता है।

(2) चर या गुण की अभिव्यक्ति हेतु व्यवहारों अथवा क्रियाओं का स्वरूप को निर्धारित करना– मापन का दूसरा पक्ष है चर से सम्बन्धित व्यवहारों तथा क्रियाओं की खोज करना या ज्ञात करना जिनसे अपेक्षित गुण अन्य गुणों से पृथक किया जा सके। इस व्यवहारों तथा क्रियाओं को ज्ञात करने के लिए चर की परिभाषा एवं संरचना को ध्यान में रखना होता है। परिभाषा के आधार पर व्यवहारों और क्रियाओं के निर्धारण में सहायता मिलती है। इसके लिए आवश्यक होता है कि परिभाषा का स्वरूप व्यावहारिक अथवा क्रियात्मक (Operational) होना आवश्यक होता है। परिभाषा और व्यवहारों में अन्त: क्रिया होना आवश्यक होता है। परिभाषा के आधार पर संगत व्यवहारों का निर्धारण किया जाता है। यह क्रिया तार्किक ढंग से की जाती है। इसमें अन्तर्दृष्टि का

उपयोग अधिक किया जाता है। व्यावहारिक परिभाषा प्रक्रिया का स्वरूप सुनिश्चित करती है। इसलिए गुण तथा चर की व्यावहारिक परिभाषा प्रभावशाली ढंग से की जानी चाहिए। व्यवहारों का स्वरूप ऐसा होना चाहिए, जिससे अपेक्षित व्यवहारों को कराया जा सके और उससे चर या गुण का मापन किया जा सके।

बिने ने बुद्धि परीक्षण के निर्माण में इसी प्रकार की अनेक क्रियाओं का सम्पादन किया तब वह बुद्धि परीक्षण के निर्माण करने में सफल हो सके। सर्वप्रथम उन्होंने बुद्धि प्रत्यय को एकल सिद्धान्त के रूप में और उसी के अनुसार उसकी परिभाषा की। परिभाषा को व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया जिससे उन्होंने बौद्धिक व्यवहारों को पहचानने और उनके स्वरूप को निर्धारित किया। इन व्यवहारों को कराने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्नों की रचना की, जिससे बुद्धि से सम्बन्धित व्यवहारों को करा सके और उन्हें अंक प्रदान कर सके। इस प्रकार मापन के अन्तर्गत परीक्षणों के निर्माण में व्यावहारिक संरचनाओं की विशेष भूमिका होती है। क्योंकि इनकी प्रकृति अप्रत्यक्ष होती है और सापेक्ष रूप में उनका मापन किया जाता है। समूह के सन्दर्भ में अर्थापन किया जाता है।

(3) चरों को परिमाण में बदलने के लिए इकाई का निर्धारण करना (Quantifying the Variable in Unit of Degree or Amount): इस तृतीय सोपान के अन्तर्गत जिन व्यवहारों को स्वीकार किया गया है, उन्हें कराने के लिए परिस्थिति के रूप में प्रश्न किये जाते हैं। इन प्रश्नों से जो उत्तर प्राप्त होते हैं। उनके अंकन के लिए इकाइयों का आवंटन किया जाता है। जिससे गुण या चर को परिमाण में बदल देते हैं। मापन की प्रक्रिया में साधारणत: तीन प्रकार की मापनियों का प्रयोग किया जाता है। जिनमें अंकन की प्रक्रिया पृथक्-पृथक् होती है- (अ) परीक्षण (ब) रेटिंग स्केल तथा (स) अनुसूची-(Inventory)। इनके अंकन की प्रक्रिया निम्नलिखित होती है-

(अ) परीक्षण (Testing)-इनके अन्तर्गत प्रश्नों में इस तरह के व्यवहारों को सम्मिलित किया जाता है कि उनके उत्तर सही व गलत होते हैं। सही व्यवहार के लिए एक अंक और गलत के लिए शून्य दिया जाता है। और सभी प्रश्नों के अंकों का योग कर लिया जाता है। जिन्हें प्राप्तांक कहते हैं। परीक्षणों का उपयोग बुद्धि निष्पति तथा प्रवणता के मापन में किया जाता है।

(ब) रेटिंग स्केल (Rating Scale)-इसके अन्तर्गत व्यवहारों को कथन के रूप में दिया जाता है। इन कथनों का रेटिंग कराया जाता है। जैसे- सहमत, असहमत तथा तटस्त। या पाँच बिन्दुओं में जैसे- उत्तम, अच्छा, सामान्य, हीन तथा अतिहीन। इनमें किसी एक बिन्दु पर चिन्ह लगाया जाता है। इसमें सही और गलत नहीं होता, अपितु जो उत्तर प्राप्त होता है उसके महत्व देकर अंक दिये जाते हैं। जैसे- अतिहीन को शून्य (0) और हीन को एक (1) सामान्य को दो (2) अच्छा को तीन (3) उत्तम को चार (4) अंक दिये जाते हैं। किन्हीं परिस्थितियों में ऋण में अंक दिये जाते हैं। अभिवृत्ति के मापन में अंक ऋण में दिये जाते हैं। इन अंकों का योग कर लिया जाता है। इस प्रकार की मापनियों का उपयोग अभिवृत्ति, अभिरूचि आदि का मापन किया जाता है।

(स) अनुसूची (Inventory)-इस प्रकार की मापनियों का उपयोग व्यक्तित्व, अभिरूचियों तथा मूल्यों के मापन में किया जाता है। इसमें जो व्यवहार कराये जाते हैं। वह सही एवं गलत नहीं होते बल्कि उनके व्यवहारों से उस चर के सम्बन्ध में बोध होता है। प्रश्नों को एक कथन के रूप में दिया जाता है और उन कथनों के उत्तर हाँ, ना तथा अज्ञात में दिये जाते हैं। जिनके आधार पर व्यक्तित्व और अभिरूचियों का मापन होता है।

इस सोपान की सबसे बड़ी समस्या उस समय होती है। जब किसी चर के मापन के लिए अनुमापनी की रचना की जाती है कि प्रश्नों का स्वरूप किस प्रकार का रखा गया है और किस रूप में उत्तर कराये गये हैं और उनके आकलन के लिए किस प्रकार अंक प्रदान किये जाएं। क्योंकि प्रमाणिक परिस्थितियों में अंकन की प्रक्रिया भी प्रमाणिक होनी चाहिए। इसमें चर की प्रकृति किस प्रकार की है इसका निर्धारण करना आवश्यक होता है। जैसे-अभिवृत्ति की प्रकृति द्विव-धुर्वी (Bi-polar) होती है, इसमें अभिवृत्ति धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनो ही प्रकार की होती है। इस अभिवृत्ति में अंक ऋणात्मक भी प्राप्त हो सकते हैं। अंकन की प्रक्रिया का बोध चर की परिभाषा से होना चाहिए।